कर्नाटक संगीत

माध्यमिक स्तर

सिद्धांत (242)

1

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
आईएसओ 9001 : 2000 प्रमाणित
(मा.सं.वि.मं. भारत सरकार के अंतर्गत एक स्वायत्त संस्था)
ए-24-25 इंस्टीट्यूशनल एरिया, सेक्टर-62, नोएडा-201301 (उ. प्र.)
वेबसाइट : www.nios.ac.in टोल फ्री नं. - 18001809393

आभार

सलाहकार समिति

- अध्यक्ष
  रा.मु.वि.शि.सं., नोएडा
- निदेशक (शैक्षिक)
  रा.मु.वि.शि.सं., नोएडा

पाठ्यक्रम समिति

- प्रो. एम. रामनाथन
  कर्नाटक संगीत में प्रोफेसर
  (सेवानिवृत्त)
  मद्रास विश्वविद्यालय, चेन्नई
- डॉ. आर. एन. श्रीलता
  कर्नाटक संगीत में प्रोफेसर
  गायन विभाग, मैसूर विश्वविद्यालय
  मैसूर
- डॉ. नागलवनी सूर्यनारायन
  पूर्व शिक्षिका, यूनि कॉलिज
  ललित कला, मैसूर
- प्रो. राधा वंकटचलन
  कर्नाटक संगीत में प्रोफेसर (सेवानिवृत्त)
  कर्नाटक संगीत विभाग
  दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- डॉ. टी. एन. पद्मा
  प्रोफेसर एवं अध्यक्ष (सेवानिवृत्त)
  गायन विभाग, ललित कला,
  मैसूर
- डॉ. उषा लक्ष्मी कृष्णमूर्ति
  कर्नाटक संगीतज्ञ
  मैलापुर, चेन्नई
- प्रो. पी.बी. कन्न कुमार
  प्रोफेसर
  कर्नाटक संगीत विभाग
  दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- डॉ. टी.के.वी. सुब्रमण्यं
  इतिहास विभाध्यक्ष
  दिल्ली विश्वविद्यालय
  मृदंगं वादक
- प्रो. टी. आर. सुब्रमण्यं
  संगीत शास्त्रज्ञ
  अन्ना नगर, चेन्नई
- डॉ. बसन्त कृष्ण राव
  एसोसियट प्रोफेसर
  कर्नाटक संगीत विभाग
  दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- डॉ. बी. एम. जयश्री
  संगीत में प्रोफेसर
  पर्फोर्मिंग आर्ट्स विभाग
  बेंगलुरू विश्वविद्यालय
  बेंगलुरू
- श्रीमती संचिता भट्टाचार्य
  वरिष्ठ कार्यकारी अधिकारी एवं
  पाठ्यक्रम समन्वयक
  पर्फोगिंग आर्ट्स शिक्षा
  रा.मु.वि.शि. संस्थान, नोएडा

पाठ लेखक

- डॉ. आर. एन. श्रीलता
  कर्नाटक संगीत में प्रोफेसर
  गायन विभाग, मैसूर विश्वविद्यालय
  मैसूर
- प्रो. टी.वी. मणिकंदन
  प्रोफेसर
  कर्नाटक संगीत विभाग
  दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- प्रो. पी.बी. कन्न कुमार
  प्रोफेसर
  कर्नाटक संगीत विभाग
  दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- डॉ. बी. एम. जयश्री
  संगीत में प्रोफेसर
  पर्फोर्मिंग आर्ट्स विभाग
  बेंगलुरू विश्वविद्यालय, बेंगलुरू
- डॉ. नागलक्ष्मी सूर्यनारायन
  पूर्व शिक्षिका, यूनि कॉलेज
  ललित कला, मैसूर
- प्रो. उन्निकृष्णन
  संकाय अध्यक्ष
  इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय
  खैरागढ़, छत्तीसगढ़

संपादक मंडल

- प्रो. उन्निकृष्णन
  संकाय अध्यक्ष
  इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय
  खैरागढ़, छत्तीसगढ़
- प्रो. टी.वी. मणिकंदन
  प्रोफेसर
  कर्नाटक संगीत विभाग
  दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- विदूशि सरस्वती राजगोपालन
  सर्वोच्च ग्रेड वीणा वादक
  ऑल इंडिया रेडियो,
  दिल्ली
- प्रो. राधा व्यंकटचलन
  कर्नाटक संगीत में प्रोफेसर (सेवानिवृत्त)
  कर्नाटक संगीत विभाग, दिल्ली
  विश्वविद्यालय, दिल्ली

अनुवादक

- डॉ. त्रच्चा जैन,
  पूर्व सहायक प्रोफेसर
  भारती कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डी.टी.पी. कार्य

शिवम् ग्राफिक्स, रानी बाग दिल्ली-110034

अपने साथ दो शब्द

प्रिय शिक्षार्थी

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान के माध्यमिक स्तर पर कर्नाटक संगीत के पाठ्यक्रम में आपका स्वागत है। और आशा करते कि आप मुक्त तथा दूरस्थ विद्यालयी शिक्षा प्रणाली को पसंद करेंगे। संगीत, लय तथा ताल के माध्यम से आपने भावों को प्रकट करने का एक रोचक माध्यम है। यह पाठ्यक्रम हिंदुस्तानी संगीत की गहरी दृष्टि प्रदान करेगा तथा इसके मूलभूत के साथ व्यक्तित्व की उन्नति में सहायक होगा। संगीत के इस पाठ्यक्रय में सिद्धांत तथा प्रयोग शामिल होगा और सिद्धांत के लिए 40 अंक तथा प्रयोग के लिए 60 अंक रखे गए हैं। पाठ्यक्रम विशेष रूप से आपके लिए बनाया गया हैं जो सहजता से समझते योग्य है। इसे छह स्वतंत्र भागों में विभाजित किया गया है। इस पाठ्यक्रम में सैद्धांतिक तथा प्रयोगिक पक्षों का ज्ञान होगा, जिसमें संगीत एवं भारतीय तकनीकी शब्दावली पर विशेष बल दिया गया है। साथ आप इसमें अलग-अलग संगीतज्ञों तथा उनके संगीत के क्षेत्र में अवदान के विषय में जानेंगे। ये आपको संगीत संबंधी अलग-अलग बंदिशों को समझने में सहायक है। शास्त्रीय तथा सुगम संगीत के समन्वय से आप शास्त्रीय सुगम संगीत तथा ताल, अलंकार को समझ सकेंगे। प्रायोगिक संगीत की कक्षाएं आपके अध्ययन केन्द्र पर लिए जाएँगी।

भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय (मा.सं.वि.मं.) द्वारा स्थापित स्वयं प्लेटफॉर्म के अंतर्गत ''मूक्स'' (मॉसीव ओपन ऑनलाईन कोर्स) को स्थापित करने में संस्थान को विशेष खुशी है। अनेक विषयों में माध्यमिक स्तर के विषयों का पाठ्यक्रम वीडियो तथा वार्तालाप के माध्यम से स्वयं के प्लेटफॉर्म पर उपलब्ध है। आप www.swayam.gov वेबसाइट पर जाकर नामांकन कर सकते हैं।

एनआईओएस सभी शैक्षिक वीडियो को (24x7) मा.स.वि. मंत्रालय द्वारा स्थापित स्वयंप्रभा डी.टी.एच. चैनल पर (2027 से 2032) तथा डीटीएच सजीव प्रसारण दोपहर 3.00 से सायं 5.00 बजे तक (सोमवार से शुक्रवार प्रस्तुत करता है)।

हम आशा करते है कि आप हमारे साथ कर्नाटक संगीत सीखने में खुशी महसूस करेंगे। इस सम्बन्ध में हम आपके सुझावों को आमंत्रित करते हैं। कृपया संलग्न फॉर्म में आपने सुझाव दीजिए।

शुभकामनाओं सहित।

पाठ्यक्रम समन्वय समिति

अपने पाठ कैसे पढ़ें

हिन्दुस्तानी संगीत विषय के सिद्धांत की इस पाठ्य सामग्री को विशेष रूप से आपकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए निर्मित किया गया है। आप स्वतंत्र रूप से स्वयं पढ़ सकें इसलिए इसे एक प्रारूप में ढाला गया है। निम्नलिखित संकेत आपको सामग्री का सर्वोत्तम उपयोग करने का तरीका बताएंगे। दिए गए पाठों को कैसे पढ़ना है, आइए जानें–

पाठ का शीर्षक : इसे पढ़ते ही आप अनुमान लगा सकते है कि पाठ में क्या दिया जा रहा है। इसे पढ़िए।

भूमिका : यह भाग आपको पूर्व जानकारी से जोड़ेगा और दिए गए पाठ की सामग्री से परिचित कराएगा। इसे ध्यानपूर्वक पढ़िए।

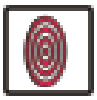

उद्देश्य : प्रस्तुत पाठ को पढ़ने के बाद आप इस पाठ के उद्देश्यों को प्राप्त करने में समर्थ हो जाएंगे। इन्हें याद कर लीजिए।

पाठगत प्रश्न : इसमें एक शब्द अथवा एक वाक्य में पूछे गए प्रश्न हैं तथा कुछ वस्तुनिष्ठ प्रश्न हैं। ये प्रश्न पढ़ी हुई इकाई पर आधारित हैं। इनका उत्तर आपको देते रहना है। इसी से आपकी प्रगति की जाँच होगी। ये सवाल हल करते समय आप हाथ में पेंसिल रखिए और जल्दी-जल्दी सवालों के समाधान ढूँढ़ते रहिए और अपने उत्तरों की जाँच पाठ के अंत में दी गई उत्तरमाला से मिलाइए। उत्तर ठीक न होने पर इकाई को पुनः पढ़िए।

आपने क्या सीखा : यह पूरे पाठ का संक्षिप्त रूप है–कहीं यह बिंदुओं के रूप में है, कहीं आरेख के रूप में तो कहीं प्रवाह चार्ट के रूप में। इन मुख्य बिंदुओं का स्मरण कीजिए। यदि आप कुछ अपने मतलब की मिलती-जुलती नई बातें जोड़ना चाहते हैं तो उन्हें भी वहीं बढ़ा सकते हैं।

पाठांत प्रश्न : पाठ के अंत में दिए गए लघु उत्तरीय तथा दीर्घ उत्तरीय प्रश्न हैं। इन्हें आप अलग पृष्ठों पर लिखकर अभ्यास कीजिए। यदि चाहें तो अध्ययन केंद्र पर अपने शिक्षक या किसी उचित व्यक्ति को दिखा भी सकते हैं और उन पर नए विचार ले सकते हैं।

उत्तरमाला : आपको पहले ही बताया जा चुका है इसमें पाठगत प्रश्नों और क्रियाकलापों के उत्तर दिए जाते हैं। अपने उत्तरों की जाँच इस सूची से कीजिए।

शब्दावली: पाठों में आए कठिन शब्दों को प्रत्येक पाठ के अंत में दिया गया है। इन शब्दों की व्याख्या स्वयं करें।

विषय-सूची

क्र.सं.	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
1.	भारतीय संगीत का उद्‌गम एवं विकास	1
2.	कर्नाटक संगीत की मुख्य धारणायें	14
3.	प्रमुख रचयिताओं की जीवनियाँ	30
4.	अभ्यास गान का परिचय (सरली वरीसई से स्वरजाति तक)	39
5.	सभा गान का परिचय	54
6.	भारतीय वाद्‌यों का सामान्य वर्गीकरण (तानपुरा बजाने की तकनीक और बनावट का विस्तृत अध्ययन)	67
7.	कर्नाटक संगीत की स्वर लिपि पद्धति	79
	(i) पाठ्‌यक्रम	(i–v)
	(ii) प्रश्न पत्र का प्रारूप	(vi–vii)
	(iii) नमूना प्रश्नपत्र	(viii–ix)
	(iv) अंक योजना	(x–xiv)

1

भारतीय संगीत का उद्गम एवं विकास

भारतीय शास्त्रीय संगीत कई शताब्दियों से होते हुए एक सूक्ष्म एवं वैभवशाली कला के रूप में विकसित हुआ है। विभिन्न प्रकार की संगीतात्मक संरचनाओं (रागों), स्वरों के अलंकरणों तथा लयात्मक संयोजनों के माध्यम से भारतीय शास्त्रीय संगीत प्रस्तुतकर्ता और श्रोता की भावात्मक अथवा रस अनुभूति का मेल करने का प्रयास करता है। भारत में शास्त्रीय संगीत का संगीत के अन्य प्रकारों, जैसे –लोक, भक्ति, नृत्य, ओपेरा, सुगम, कथा कलाक्षेप इत्यादि के साथ एक समपूरक संबंध है। भारतीय शास्त्रीय संगीत भारतीय संस्कृति का अंग है। संगीत भारत में दैनिक जीवन का अभिन्न अंग रहा है। सिद्ध पुरुषों के लिए अध्यात्मिक अनुभूति एवं भगवान को प्राप्त करने का मार्ग होने के साथ यह सामान्य व्यक्ति के लिए एक सुखद मनोरंजन माना जाता है. पुराणों में हमें शिव, कृष्ण और सरस्वती का वर्णन मिलता है, जो नाद, बांसुरी और वीणा से संबंधित हैं। तुमबुरू, नारद, नन्दी एवं अन्य दिव्य गण भी कुशल संगीतज्ञ माने जाते हैं। इन सभी आयामों ने भारतीय शास्त्रीय संगीत को एक अलौकिक स्वरूप प्रदान किया। शास्त्रीय संगीत की महत्ता यह है कि वह लोक, भक्ति, नृत्य, ओपेरा, सुगम, कथा कलाक्षेप इत्यादि सभी प्रकार के संगीत के साथ संबद्ध है। इन प्रकारों का विकास भी शास्त्रीय संगीत के साथ ही साथ एक दूसरे के समपूरक के रूप में हुआ।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात शिक्षार्थी:

- कर्नाटक शास्त्रीय संगीत की समृद्ध धरोहर के संरक्षण के लिये म्यूजिकोलोजी के महत्त्व को पहचान पायेगा;
- उन विभिन्न कालों को पहचान पायेगा जब महत्त्वपूर्ण टीकायें एवं संयोजक अस्तित्व में आये तथा मील के पत्थर स्थापित किये गये;

- स्वर्ण युग के सांगीतिक त्रिदेव का वर्णन कर पायेगा एवं ललित कला के रूप में संगीत के बहुमुखी विकास की सराहना कर पायेगा;
- संचार माध्यमों के विकास एवं शास्त्रीय संगीत की कला के संरक्षण तथा प्रसार में उनके योगदान के ज्ञान को अर्जित कर पायेगा
- वैदिक काल की केवल एक आध्यात्मिक कला पद्धति से आधुनिक काल की एक भली प्रकार से विकसित संगीत कला के रूप में संगीत के विकास का अनुगमन कर पायेगा

1.1 भारतीय संगीत के इतिहास के तीन प्रमुख काल

भारतीय संगीत के इतिहास का अध्ययन प्राचीन, मध्य तथा आधुनिक, तीन प्रमुख कालों में किया जा सकता है। प्राचीन संगीत का युग वैदिक काल से संगीत रत्नाकर के समय तक माना जाता है, जिसके पश्चात संगीत की मध्य कालीन पद्धति का विकास हुआ। लगभग 14वीं शताब्दी के इस काल में भारतीय संगीत दो शाखाओं में विभाजित हो गया- हिंदुस्तानी तथा कर्नाटक पद्धति। ये दोनों शाखायें पूर्णतया विकसित एवं स्थापित हो गयीं। इस काल में असंख्य म्यूजिकोलोजिस्ट तथा संयोजक अस्तित्त्व में आये तथा उन्होंने राग, ताल एवं संगीत की विधाओं को समृद्ध किया।

1.2 प्राचीन काल

वेद, अगम, उपनिषद, वायु पुराण, बृहद्धर्म पुराण, रामायण, महाभारत, भागवत, शिक्षा ग्रंथ इत्यादि जैसे हमारे देश के प्राचीन साहित्य में शास्त्रीय संगीत के मूल सिद्धांतों के बहुमूल्य उल्लेख मिलते हैं, जैसे- सप्त स्वर, तीन ग्राम, इक्कीस मूर्छनायें, तीन लय (गति), नव रस, तीन स्थान (सप्तक), 22 श्रुतियां आदि। नारद परिव्रजकोपनिषद में सर्वप्रथम सप्त स्वर का उल्लेख है। वैदिक युग में आधार षड्ज की अवधारणा नहीं थी। वेदों के पाठ के लिये केवल स्वर युक्त संगीत का प्रयोग किया जाता था। वेद प्राचीन भारतीय ज्ञान एवं संस्कृति का अमूल्य कोष हैं। चार वदों में से साम वेद से ही संगीत का उद्गम माना जाता है। वैदिक गायन केवल एक स्वर के गायन से आरंभ हुआ। धीरे-धीरे, पाठ करने की एक अच्छी और आकर्षक शैली खोजने में क्रमशः दो और फिर तीन स्वरों का उपयोग होने लगा। अंत में सात मूल स्वरों के सप्तक स्थापित हुए, जो बाद में वैदिक पठन के संगीत कला में परिवर्तित होने की पराकाष्ठा पर पहुंचे। इस प्रक्रिया में सदियां बीत गयीं।

आज के वाद्यवृंद एवं संगीत सभा, दोनों का उद्गम प्राचीन काल में हुआ है।यज्ञों में वैदिक मंत्र यज्ञ अग्नि की परिक्रमा करते हुए तंत्री एवं ताल वाद्यों के साथ नृत्य करते हुए गाये जाते थे। तत्पश्चात, समूह में वाद्यों का बजाना 'कुतप' कहलाया जाने लगा। कुतप वाद्यवृंद का आरंभिक रूप है। राग की अवधारणा का तब तक उद्भव नहीं हुआ था। इन्हें सप्तस्वरों के अनुसार मिलाकर खुले तारों पर बजाया जाता था। मनोधर्म संगीत तथा संगीत की स्वरलिपि, जैसा आजकल हम जानते हैं, का अस्तित्व नहीं था। वेदों के पाठ की धुन के उतार-चढ़ाव हस्तलेखों पर संकेतात्मक

टिप्पणी

रूप से अंकित होते थे, जबकी लय अंगुलियों के विशेष संचालन द्वारा बतायी जाती थी। धार्मिक ग्रंथों के अतिरिक्त, हमारे प्राचीन मंदिरों और गुफाओं में मिलने वाले मूर्तियों और चित्रों ने भी समकालीन संगीत के बहुमूल्य प्रमाण सुरक्षित रखने में योगदान दिया है। दक्षिण में चेरा राजाओं के दरबार में एक प्रसिद्ध विद्वान, इलांगो अडिगल ने सिलप्पदिकारम में उल्लेख किया है कि प्राचीन तमिलों ने मूल संगीत विचारों का विकास प्रथम शताब्दी के आरंभ में ही कर लिया था। महेंद्र वर्मा (7वीं ई.) ने कुडुमियामलई शिलालेखों में समकालीन संगीत तथ्यों का उल्लेख कर के करनाटक संगीत की विशेष सेवा की है।

प्राचीन तमिल संगीत में कई 'पन' प्रयुक्त होते हैं,जो रागों के समकक्ष होते हैं। स्थान (सप्तक) का उन्हें ज्ञान था। श्रुतियों और 12 स्वर स्थानों से वे अवगत थे। करुनामृत सागर एक अन्य तमिल ग्रंथ है जिसमें संगीत के कई रोचक तथ्यों का विवरण है।

1.2.1 ग्रंथ

आरंभिक समय से भारतीय संगीत और म्यूजिकोलोजी (लक्ष्य एवं लक्षण) का निरंतर विकास हुआ है। संगीत की परिवर्तनशील प्रवृत्तियों के अनुसार लक्षणों का निरंतर रूपांतरण किया गया अथवा उन्हें पुन: लिखा गया। परंपरा के ढांचे में नये लक्षणों का निरंतर समावेश एवं अंगीकरण हुआ। ग्रंथों में पूर्वकालिक संगीत और म्यूजिकोलोजी तथा अंगीकृत परिवर्तनों का स्पष्ट विवरण दिया गया है। उनका प्रमुख केंद्र सैद्धांतिक पक्षों पर था। इस प्रदर्शनकारी कला का क्रियात्मक भाग मौखिक परंपरा से गुजरता था तथा ग्रंथों में इसका उल्लेख सूत्रों के रूप में हुआ है, अत: हमें तत्कालीन संगीत के स्वरूप का केवल एक धुंधला अनुमान है।

भरत, मतंग और नारद जैसे सुविख्यात ऋषियों ने संगीत के प्रसिद्ध ग्रंथ लिखे हैं। दूसरी शताब्दी के आरंभ में ही भरत मुनि ने नाट्य शास्त्र लिखा जिसमें उन्होंने 28 से 34 अध्याय तक भारतीय संगीत का उल्लेख किया है। उन्होंने संगीत वाद्यों का तत, सुषिर, अवनद्ध और घन श्रेणियों की वर्गीकरण पद्धति के अनुसार वर्णन किया है।यह वर्गीकरण अभी भी पूर्णतया स्वीकृत है। भारत ने अपनी ध्रुव एवं चल वीणा के माध्यम से प्रयोग किया और 22 श्रुतियों को परिगणित किया।

प्रारंभिक उपनिषदों में से एक, नारद परिव्रजक में सप्त संगीत स्वरों का उल्लेख किया गया है। सांगीतिक ग्रामों, सप्त स्वरों एवं 22 श्रुतियों तथा उनका सप्तक में विभाजन सांगीतिक अवधारणाओं के मील के पत्थर थे, जिनसे अंतत: रागों का विकास हुआ। दसवीं शताब्दी के लगभग म्यूजिकोलोजी और संगीत के प्राय: सभी मौलिक तत्त्वों का पूर्ण रूप से अवतरण हो गया था। भारतीय संगीत के सात सोल्फा स्वर, स, रि, ग, म, प, ध, नि, अरब और फारसी देशों से होते हुए यूरोपीय देशों तक पहुंचे तथा वहां के संगीत को प्रभावित किया जो अभी आरंभिक स्थिति की कला थी। पश्चिम ने C, D, E, F, G, A, B को अपने चर्च संगीत के लिये सात सोल्फा अक्षरों के रूप में ग्रहण किया। भारतीय संगीत मेलडी शैली में निरंतर विकसित होता रहा, जबकी पाश्चात्य संगीत का विकास हार्मनी शैली में हुआ।

पाठगत प्रश्न 1.1

1. भारतीय संगीत के इतिहास में प्रमुख काल कौन से हैं?
2. भारतीय शास्त्रीय संगीत दो भागों में कब विभाजित हुआ?
3. शास्त्रीय संगीत के दो मूल सिद्धांतों के नाम बताइये।
4. कुडुमियामलई शिलालेख महत्त्वपूर्ण क्यों है?
5. संगीत के ग्रंथ महत्त्वपूर्ण क्यों हैं?
6. प्राचीन काल के दो ग्रंथों तथा उनके लेखकों के नाम बताइये।
7. कुतप क्या है?
8. सप्त स्वर पश्चिम में कैसे पहुंचे?

1.3 मध्य काल

13वीं शताब्दी के लगभग संपूर्ण भारत में संगीत की एक ही प्रणाली थी। सप्त स्वर, सप्तक, श्रुति इत्यादि, एक प्रकार के मौलिक सिद्धांत विद्‌धमान थे। हरिपाल ने सर्वप्रथम हिंदुस्तानी और कर्नाटक संगीत के पारिभाषिक शब्दों का उल्लेख किया। उत्तर में मुस्लिम शासन के प्रादुर्भाव से भारतीय संगीत कला एवं अरबी तथा ारसी संगीत प्रणालियों का परस्पर प्रभाव पड़ा। मुस्लिम शासकों के दरबार में संरक्षण से भारतीय संगीत नयी दिशा में प्रसरित हुआ। इसकी तुलना में, दक्षिण भारत बिना किसी विदेशी आक्रमण अथवा उथल- पुथल के स्थिर रहा। वहां वह मंदिरों और परंपरागत हिंदू राजाओं के प्रोत्साहन से लगातार प्राचीन परंपरा के अनुसार उन्नत और समृद्ध होता रहा। एक ही स्रोत, वेदों, से उत्पन्न हिंदुस्तानी और कर्नाटक संगीत दो स्वतंत्र प्रणालियों के रूप में विकसित हुईं।

देश में 7वीं शताब्दी से भक्ति आंदोलन के समय सैंकड़ों संत गायक और धार्मिक शिक्षक हुए। तमिल क्षेत्र में शैव और वैष्णव संतों ने तेवाराम और दिव्य प्रबंध लिखे। भक्ति संगीत गायक जैसे पुरंदर दास, भद्राचल राम दास, अन्नामाचार्य, मीरा बाई, सूर दास, कबीर दास, तुलसी दास, गुरु नानक और अन्य संत गायकों ने हजारों सरल भक्ति गीतों की रचना की। ये गीत भक्ति, नैतिक जीवन और सार्वभौमिक प्रेम के संदेश सहित सरल लय और प्रभावी धुनों में रचे गये। जन साधारण तक पहुंचने के लिये इन गीतों के लिये प्रादेशिक भाषाओं का कफी प्रयोग किया गया। दक्षिण में इन गीतों में पल्लवी, अनुपल्लवी अथवा चरणा के सरल आकार युक्त प्राचीन प्रबंधों के लक्षण थे, जो भविष्य के लिये रत्नजटित कृति का केंद्र बन गये।

हरिदासों में संत पुरंदर दास, जो 'कर्नाटक संगीत के पितामह' के रूप में पूजनीय हैं, एक प्रमुख संयोजक माने जाते हैं। पुरंदर दास ने 108 प्राचीन तालों को 35 तालों की प्रणाली के रूप में

टिप्पणी

सरलीकृत किया, जिसमें 7 सूलादि ताल और उनके 5 प्रकार (जाति) सम्मिलित थे। उन्होंने मलहारी राग में सरली वरीसई, सप्त ताल अलंकार, गीतों को सूत्रबद्ध किया और प्रारंभिक विद्यार्थियों के लिये अभ्यासगान को व्यवस्थित किया। पुरंदर दास द्वारा परिगणित तालों की नयी प्रणाली में प्राचीन ताल प्रणाली के षडंगों के स्थान पर लघु, द्रुत और अनुद्रुत का प्रयोग किया गया है। चापु ताल का कीर्तन या दसरा पदगलु नामक असंख्य भक्ति गीतों में प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया गया है।

इस काल में रागों के वर्गीकरण अधिक स्पष्ट हुए। राग भारतीय संगीत की आत्मा है और अंतर राष्ट्रीय संगीत को भारत कि देन है। विद्यारण्य (14वीं शताब्दी) ने अपने ग्रंथ संगीत सार में 15 मेल और उनके जन्य राग बताये हैं। रामामात्य (16वीं शताब्दी) ने अपने ग्रंथ स्वरमलकलानिधि में 20 मेल बताये हैं। यह ग्रंथ भारतीय संगीत के 2000 वर्ष के इतिहास के विकास का वर्णन तथा आधुनिक कर्नाटक संगीत की प्रस्तावना है। अन्य ग्रंथों सहित इन ग्रंथों में प्रत्येक राग के लिये विशेष गमक युक्त राग लक्षणों का उल्लेख है। कर्नाटक संगीत में रागें किसी विशेष स्वर को अलंकृत करने के लिये केवल विशेष गमक अलंकारों के प्रयोग से जीवंत होती हैं।

17वीं शताब्दी में व्यंकटमखी द्वारा रचित चतुरदंडी प्रकाशिका का आविर्भाव हुआ। यह एक पथ प्रदर्शक ग्रंथ था जिसके माध्यम से आधुनिक संगीत के इतिहास का आगमन हुआ। इस ग्रंथ के अंतर्गत 16 स्वरस्थानों पर आधारित 62 असंपूर्ण मेलकर्ता पद्धति को परिगणित किया गया है। उस समय केवल 19 मेलों का प्रचलन था। समस्त 72 मेल, उनके जन्य राग एवं विवादी मेल संगीतात्मक संभावनायें थीं। इस प्रणाली को कनकांबरी-रत्नांबरी पद्धति कहा गया। बाद में गोविंदाचार्य ने इस पद्धति को 72 संपूर्ण मेल पद्धति की भांति संशोधित एवं पुनर्निर्मित किया, जिसे कनकांगी-रत्नांगी पद्धति कहा गया। इस पद्धति के अंतर्गत मेल क्रम संपूर्ण आरोहण एवं अवरोहण युक्त थे। 72 मेल कर्ता पद्धति ने विशेष लक्षण युक्त असंख्य जन्य रागों के उद्‌भव के लिये जल द्वार खोल दिये। मध्य और आधुनिक काल के संयोजकों ने नव-निर्मित रागों में असंख्य रचनाओं का निर्माण किया। संगीत त्रिमूर्ति में मुत्तुस्वामी दीक्षितर ने व्यंकटमखी की असंपूर्ण मेल पद्धति का अनुसरण किया, परंतु त्यागराज और श्यामा शास्त्री ने गोविंदाचार्य की संपूर्ण मेल पद्धति का अनुसरण किया। आजकल संपूर्ण मेल पद्धति प्रचलित है।

पाठगत प्रश्न 1.2

1. भारतीय संगीत में मध्य काल में होने वाला सबसे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन बिंदु क्या है?
2. भारतीय शास्त्रीय संगीत के विभाजन का प्रमुख कारण क्या था?
3. भक्ति आंदोलन के किंहीं तीन संत गायकों के नाम बताइये।
4. भक्ति आंदोलन संगीत के विकास के लिये महत्त्वपूर्ण क्यों माना जाता है? संक्षेप में लिखिये।
5. दो लक्षणकारों तथा उनके मध्य कालीन ग्रंथों के नाम बताइये।
6. व्यंकटमखी की चतुरदंडी प्रकाशिका इतनी महत्त्वपूर्ण क्यों है? संक्षेप में लिखिये।

टिप्पणी

7. संशोधित संपूर्ण मेल पद्धति का प्रचलन किसने किया?

8. वर्तमान संगीतज्ञों द्वारा कौन सी मेल पद्धति का अनुसरण किया जाता है?

1.4 18वीं शताब्दी- स्वर्ण युग

इस युग में संगीत विधाओं, रागों, तालों, संगीत वाद्य, संगीत स्वरलिपि पद्धति इत्यादि का गुण और संख्या दोनों में बहुमुखी विकास और कार्य कलाप हुआ। विद्वत्तापूर्ण संगीत विधाओं जैसे भली भांति अलंकृत कृति, स्वरजति, वर्ण, पद, तिल्लाना, जावली, रागमालिका इत्यादि की रचना बड़ी संख्या में हुई। यहां पर यह उल्लेख करना आवश्यक है कि विभिन्न विधाओं की इन सभी रचनाओं के मूल तत्त्व प्राचीन प्रबंधों से लिये गये हैं। केवल सांगीतिक और साहित्यिक पक्ष, इन भागों ने नयी रचनाओं में परिष्कृत और रूपांतरित आकार ग्रहण किया। सांगीतिक रचनाओं की सुरक्षा और संरक्षण के लिये स्वरलिपि का प्रयोग किया गया और वर्तमान पीढ़ी भाग्यशाली है कि उनके लिये पहले की बहुमूल्य रचनायें उपलब्ध हैं।

हिंदुस्तानी संगीत के लिये भी 18वीं-19वीं शताब्दी समान रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। पंडित विष्णु नारायण भातखंडे ने ठाठ प्रणाली के अंतर्गत हिंदुस्तानी रागों को क्रमबद्ध किया। ख्याल, ठुमरी और तराना जैसी विभिन्न रचनात्मक विधाओं की रचना हुई। उस्ताद अल्लादिया खां, पंडित ओंकार नाथ ठाकुर, पं. विष्णु दिगंबर पलुस्कर, उस्ताद बड़े गुलाम अली खां जैसे प्रसिद्ध और प्रमुख संगीतज्ञ अगली सदी के ऐतिहासिक चरित्र हुए। आगरा, ग्वालियर, जयपुर, किराना, लखनऊ इत्यादि प्रमुख घरानों की स्थापना हुई। इसी काल में पाश्चात्य शास्त्रीय संगीत की भी समृद्धि और विकास हुआ। बाक, हेडन और बिथोवन जैसे ऐतिहासिक सांगीतिक चरित्र, जो पाश्चात्य संगीत की त्रिमूर्ति माने जाते हैं, अस्तित्व में आये और पाश्चात्य शास्त्रीय संगीत को नयी उंचाईयों तक ले गये। वेगनर एक अन्य रचनाकार था जिसने पाश्चात्य संगीत को समृद्ध किया।

1.4.1 कर्नाटक संगीत के इतिहास में संगीत त्रिमूर्ति का स्वर्ण युग

12वीं शताब्दी के पश्चात्, जयदेव (अष्टपदी- गीत गोविंद), नारायण तीर्थ (तरंग-कृष्ण लीला तरंगिणी), अरुणागिरी नाथर (तिरप्पुगझ), अन्नामाचार्य (संकीर्तन), क्षेत्रग्न (पद), गिरिराज कवि की सरल कृतियां, मार्गदर्शी शेशा अय्यंगर, मेलत्तुर वीर भदरय्या, पल्लवी गोपाल अय्यर, रामस्वामी दिक्षितार, अपि अपय्या (वीरिबोनी-भैरवी-अत्ता ताल), सोंती व्यंकटरमय्या (त्यागराज के गुरु) तथा अन्य जैसे कई रचनाकारों अथवा संयोजकों ने अपनी रचनाओं की विस्तृत विविधताओं से त्रिमूर्ति के पूर्ववर्ती चरण को समृद्ध किया। अत:, नींव तैयार हो चुकी थी। वर्ण, कृति इत्यादि जैसी आधुनिक संगीत विधायें अपने रचनाकारों द्वारा परिभाषित हो चुकी थीं। प्रयोग में आने वाली रागों की संख्या में वृद्धि हुई। सरलीकृत ताल पद्धति ने इन्हें और अधिक बल दिया। ये सभी रचनाकार, म्यूजिकोलोजिस्ट और विद्वान कर्नाटक संगीत के त्रिमूर्ति के स्वर्ण युग के अग्रगामी थे।

श्री श्यामा शास्त्री, श्री त्यागराज तथा श्री मुत्तुस्वामी दीक्षितर कर्नाटक संगीत के त्रिमूर्ति के रूप

में जाने जाते हैं। उन्होंने अप्रयुक्त नई और दुर्लभ रागों में सैंकड़ों कृतियों की रचना की। ये कृतियां संगीतात्मक रूप से श्रेष्ठ हैं और उन रागों के लिये आदर्श मानी जाती हैं। ये तीनों समकालीन थे तथा तंजौर क्षेत्र के तिरुवरूर में जन्मे थे। उनके बहुत से शिष्य थे जो अपने शिक्षकों की अमूल्य रचनाओं को संग्रहीत तथा सुरक्षित रखने में सहायक हुए। कालांतर में उनमें से बहुत से शिष्य स्वयं महत्त्वपूर्ण रचनाकार बन गये तथा पहले से ही समृद्ध संगीत संग्रह में योगदान दिया।

1.4.2 श्री श्यामा शास्त्री (1963-1827 ई.)

त्रिमूर्ति में श्री श्यामा शास्त्री सबसे बड़े थे। उनकी अधिकतर कृतियां कांची की कामाक्षी देवी की प्रशंसा में हैं। कृतियां तेलगु तथा संस्कृत दोनों में हैं। वे राग भाव तथा साहित्य भाव से परिपूर्ण हैं। उनकी तीन विद्वत्तापूर्ण स्वर्जतियां तीन रत्नों के रूप में प्रसिद्ध हैं। उन्होंने मदुरई की मीनाक्षी पर 9 कृतियों की रचना की है, जो नवरत्नमालिका के नाम से जानी जाती है। उन्होंने अपनी कृतियों के लिये चापु तालों का भलिभांति प्रयोग किया है। उन्होंने पहली बार विलोम चापु का प्रयोग किया।

उनकी कृतियां मुख्यतया लय की श्रेष्ठता के लिये मानी जाती हैं । स्वरसाहित्य और स्वराक्षर उनकी कृतियों को अलंकृत करते हैं। उन्होंने मंजी, अहीरी, कलगड, चिंतामणी इत्यादि जैसी दुर्लभ रागों का प्रयोग किया है। ऐसा माना जाता है कि श्यामा शास्त्री ने लगभग 300 रचनाओं का संयोजन किया, परंतु अब तक केवल 50 रचनायों के लगभग उपलब्ध हैं।

1.4.3 श्री त्यागराज (1767-1847 ई.)

ऐसा माना जाता है कि श्री त्यागराज ने लगभग 1000 कृतियों से अधिक की रचना की है। लगभग 750 रचनायें अब तक प्रकाशित हो चुकी हैं। इनमें विद्वत्तापूर्ण एवं सरल कृतियां सम्मिलित हैं। उन्होंने सैंकड़ों रागों का प्रयोग किया। वे भगवान राम के भक्त थे। उनकी अधिकतर कृतियां तेलगु तथा कुछ संस्कृत में हैं। उन्होंने घन राग पंचरत्न कृति जैसी कुछ समुदाय कृतियां (समूह कृति) तथा अन्य पंचरत्न समूह जैसे कोवूर, लालगुडी, तिरूवत्तियूर और श्रीरंगम पंचरत्न की रचना की। उन्होंने दिव्यनाम संकीर्तन, उपचार तथा उत्सव संप्रदाय कृति समूहों की भी रचना की जिनका प्रयोग सामुहिक संगीत में सरलता से होता है। उन्होंने अपनी कुछ कृतियों के लिये देसादि और मध्यादि तालों का प्रयोग किया है। संगतियां, बहु चरण व अतीत-अनागत एडप्पु कृति विधा के लिये उनका योगदान है। उन्होंने तीन सुंदर संगीत ओपेरा- प्रहलाद भक्ति विजयम, नौका चरित्रम और श्री सीता राम विजयम की रचना की। उनका अनुसरण करने वाले विद्यार्थी त्यागराज की बहुमूल्य संगीत विरासत को सुरक्षित तथा प्रचलित करने के लिये उत्तरदायी थे।

1.4.4 मुत्तुस्वामी दीक्षितर (1775-1835 ई.)

त्रिमूर्ति में दीक्षितर सबसे छोटे थे।वे श्री विद्या उपासक थे और उन्होंने देवी पर अधिकतर ख़तियों की रचना की। उन्होंने असंख्य शैव और वैष्णव देवताओं का अपनी तीर्थ यात्राओं में दर्शन करके उन पर रचनायें की। उनकी विद्वत्तापूर्ण रचनाओं में भारतीय दर्शन, ज्योतिष, तंत्र शास्त्र तथा हिंदु

संस्कृति के विषय में उनके गहन ज्ञान का पता चलता है। उनकी सभी कृतियां संस्कृत में हैं और उनकी साहित्यिक वस्तु उच्च स्तरीय होने से सामान्य जन को समझने में थोड़ा कठिन है। कृतियां संगीत और साहित्य सौंदर्य जैसे स्वराक्षर, कई मुद्रायें, समष्टि चरण, मध्यम कला साहित्य, यति प्रास इत्यादि से प्रकाशमान हैं। व्यंकटमखी की असम्पूर्ण मेल पद्धति की रागें दीक्षितर ख्रतियों में जीवित हैं जिनमें रचयिता ने राग मुद्राओं का सुंदरता पूर्वक परिचय दिया है। दीक्षितर विद्वत्तापूर्ण समूह कृतियों के प्रवीण रचियता थे। इनके कुछ उदाहरण हैं नवग्रह कृति (ज्योतिष विज्ञान), कमलंबा नववर्ण (तंत्र शास्त्र), पंचभूत लिंग कृति (हिंदु दर्शन शास्त्र), त्यागराज विभक्ति कृति (योग) इत्यादि। उन्होंने मणीप्रवल और सुंदर रागमालाओं की भी रचना की है। दीक्षितर के प्रतिभाशाली विद्यार्थियों, शिष्य परंपरा ने उनकी परंपरा को प्रचलित किया।

1.4.5 स्वाति तिरुनल महाराज (1813-1847 ई.)

स्वाति तिरुनल महाराज ने बहुत सी रचनायें बनाई और वे महान त्रिमूर्ति के सबसे छोटी उम्र के समकालीन थे। उनका दरबार प्रतिभाशाली विद्वान, संगीतज्ञ और कलाकारों से परिपूर्ण था। उन्होंने वर्ण, कृति, जावली, तिल्लाना, कई भाषाओं में भजन तथा धरुपद, खयाल इत्यादि उत्तर भारतीय संगीत विधाओं जसी कई रचनाओं का संयोजन किया। वे एक महान विद्वान थे और उन्होंने कुचेलोपख्यान और अजमिलोपख्यान जैसे ओपेरा भी रचे। उनकी नवरात्रि कृति और नवविद्या भक्ति कृति प्रसिद्ध हैं। दुर्भाग्यवश उनकी 34 वर्ष की अल्प आयु में ही मृत्यु हो गई। उनके कोई विद्यार्थी न होने के कारण उनकी रचनाओं को प्रकाश में आने में कई वर्ष लग गये।

पाठगत प्रश्न 1.3

1. कर्नाटक संगीत के विकास के लिये ङ्कल्लवीं शताब्दी महत्त्वपूर्ण क्यों है?
2. संगीत के स्वर्ण युग के महत्त्वपूर्ण तत्त्व क्या हैं?
3. स्वर्ण युग के दो रचनाकारों के नाम बताइये।
4. संगीत के त्रिमूर्ति कौन थे? उनके नाम बताइये।
5. गीत गोविंद किसने लिखा था?
6. प्रहलाद भक्ति विजयम क्या है और उसकी रचना किसने की?
7. सब प्रकार की रचनाओं का उद्‌गम क्या है?
8. संगीत त्रिमूर्ति में प्रत्येक की एक समुदाय ख्रति का नाम लिखिये। संक्षेप में लिखिये।

1.4.6 सुब्बराम दीक्षितर

सुब्बराम दीक्षितर बालु स्वामी दीक्षितर के नाती थे। बालु स्वामी दीक्षितर ने अपनी पुत्री के पुत्र सुब्बराम दीक्षितर को गोद लिया जो बहुत प्रतिभाशाली, विद्वान और एक संगीतज्ञ एवं रचयिता

दोनो रूप में श्रेष्ट थे। 1903 ई. में उन्होंने विस्तृत संगीत प्रदर्शिनी प्रकाशित की। व्यंकटमखी की असंपूर्ण मेल पद्धति पर आधारित दीक्षितर परंपरा को संरक्षित करके कर्नाटक संगीत की बहुमूल्य सेवा की है। संप्रदाय प्रदर्शिनी राग लक्षण, लक्षण गीत, वर्ण, कृति, राग मालिका इत्यादि का संग्रह है। इसमें अन्य पूर्व त्रिमूर्ति ऐतिहासिक रचयिताओं की कुछ रचनाएं भी हैं। प्रथम मेल और उसकी जन्य रागों से आरंभ होते हुए मुत्तुस्वामी दीक्षितर की मौलिक स्वर लिपि सहित सभी कृतियों को व्यवस्थित रूप में दिया गया है। शेष मेल 72 मेल तक इसी क्रम में आते हैं। इसमें 1700 पृष्ठ हैं और 76 संगीतज्ञों/रचयिताओं की जीवनियां हैं। सुब्बराम दीक्षितर स्वयं एक रचयिता थे और उन्होंने आनंद भैरवी, सुरति इत्यादि जैसी रागों में विद्वत्तापूर्ण कृतियों की रचना की है। उन्होंने कई वर्ण तथा रागमालिका भी रचे हैं। उन्हें संगीत तथा म्यूजिकोलोजी पर लिखी गई प्रथमाभ्यासम पुस्तक लिखने का श्रेय प्राप्त है। उन्होंने एक तमिल नाटक वल्लिभरतम की भी रचना की।

त्रिमूर्ति काल के पश्चात उनके कई विद्यार्थी जो संगीतज्ञ और रचयिता बने, उनमें से कुछ का उल्लेख नीचे किया गया है।

1.4.7 त्यागराज के विद्यार्थी और अनुगामी

वालाजपेत व्यंकटरमन भागवतर, वीना कुप्पय्यर, आया भागवतर, पटनम सुब्रमन्य अय्यर, सुब्बराम भागवतर, तिल्लैस्थानम राम अय्यंगर, उमयलपुरम कृष्ण भागवतर, सुंदरा भागवतर, मैसूर वासुदेवाचार, रामनाडु श्रीनिवास अय्यंगर आदि।

1.4.8 दीक्षितर के विद्यार्थी और अनुगामी

पोनिया, वादिवेलु, शिवनंदम और चिनय्या जो तंजौर कौर्टेट के नाम से प्रसिद्ध हैं, तिरुवरूर, अय्यास्वामी, उनके अपने छोटे भाई बालुस्वामी और चिन्नास्वामी एत्तयापुरम के राजा, सुब्बराम दीक्षितर एवं अन्य।

1.4.9 श्यामा शास्त्री के विद्यार्थी और अनुगामी

अन्नास्वामी शास्त्री, सुब्बरय शास्त्री, पंचनाद अय्यर और अन्य।

20वीं शताब्दी में हजारों प्राचीन संगीत रचनायें प्रकाश में आईं और स्वर लिपि सहित प्रकाशित हुईं। ग्रंथ प्रकाशित हुए और नई म्यूजिकोलोजी की पुस्तकें प्रसिद्ध विद्वानों द्वारा लिखी गईं जिन्होंने शिक्षकों और विद्यार्थियों का मार्गदर्शन किया। वर्तमान सभा गान के विचार का उद्गम 18वीं शताब्दी में किसी समय हुआ। अब सभा गान प्रचलित हो गया है। राजसी संरक्षण के स्थान पर अब कलाकारों को कला प्रेमी लोग तथा निजी श्रोता गण प्रायोजित करते हैं। मनोधर्म संगीत, रागतानम और पल्लवी सभा गान के मुख्य आकर्षण हैं। संगीत रचनायें, विशेष रूप से कृतियां तकनीकी तथा साहित्यिक सौंदर्य से भलीभांति अलंकृत हुईं। इन रचनाओं ने वाग्गेयकार की सृजनात्मक प्रतिभा का प्रतिनिधित्त्व किया।

प्राचीन समय के सभा गान की तुलना में वर्तमान सभा गान में समय की सीमा और एक सामान्य रूप होता है जिसका परंपरागत गायक द्वारा अनुगमन किया जाता है। संगीत शुद्ध कला के रूप में अधिक से अधिक महत्त्वपूर्ण हो गया है।

दक्षिण भारतीय सभा गानों में वायलिन एक आवश्यक संगत वाद्‌य हो गया है। वीणा और अन्य भारतीय वाद्‌यों को मिलानेध आंगुलिक मुद्रा आदि के स्वर संबंधित गुण और गमक अलंकारों को विकसित करने के लिये नई तकनीकों का विकास किया गया है। कर्नाटक संगीत के लिये मेंडोलिन, सैक्सोफोन आदि जैसे पाश्चात्य संगीत वाद्‌य अपनाये गये हैं। संगीत शिक्षण पद्धति भी परंपरागत गुरुकुल पद्धति से संस्थागत शिक्षण तथा व्यक्तिगत निजी शिक्षण में परिवर्तित हुई है। विद्यार्थियों के लिये एक समय में एक से अधिक गुरुओं से शिक्षा प्राप्त करना सामान्य है। चूंकि विद्यार्थी संगीत की भिन्न पद्धतियों के संपर्क में आता है, अतः वह किसी विशेष पद्धति या बानी का संगीत सभा, गोष्ठी, व्याख्यान प्रदर्शन जो प्रसिद्ध संगीत सभाओं, संस्थाओं और संगठनों में होते हैं जहां संगीत विचारों का आदान प्रदान होता है, वहां प्रतिनिधित्त्व करने में असमर्थ है। छ्ड्वीं शताब्दी में विज्ञान और तकनीक में अभूतपूर्व प्रगति हुई। इलेक्ट्रोनिक माध्यम ने परस्पर संचार और नेटवर्क प्रणाली में क्रांति की है। वर्तमान समय में संगीतज्ञ और रचयिता के संगीत और अन्य विवरण भावी पीढ़ी के लाभ के लिये ख्रश्य तथा श्रव्य माध्यम द्वारा चिरकाल तक सुरक्षित और संरक्षित रखे जा सकते हैं।

पाठगत प्रश्न 1.4

1. सुब्बराम दीक्षितर कौन थे? उनके प्रसिद्ध ग्रंथ का नाम बताइये। यह ग्रंथ इतना महत्त्वपूर्ण क्यों है?
2. त्रिमूर्ति में से किसी एक के दो विद्यार्थियों के नाम बताइये।
3. संगीत की बढ़ोतरी के लिये तकनीक में कौन सी प्रमुख प्रगति हुई?
4. आधुनिक समय के सभा गान और शिक्षण प्रणाली के दो प्रमुख लक्षणों के नाम बताइये।

आपने क्या सीखा

विभिन्न लक्षणकारों, इन ग्रंथों के टीकाकारों, महान रचयिताओं, संगीतज्ञों और संरक्षकों के योगदान का भारतीय संगीत का इतिहास एक लिखित प्रमाण है। वर्तमान समय में इलेकट्रोनिक माध्यम तथा परस्पर संचार की प्रगति ने संगीत और म्यूजिकोलोजी दोनों के संरक्षण और परस्पर संचार में अत्यधिक सहायता प्रदान की है। सरल वैदिक स्वरों से उच्च विकसित कलात्मक संगीत के रूप में भारतीय संगीत का परिवर्तन धीमा परंतु सूक्ष्म था। अध्ययन से प्रतीत होगा कि वैदिक ;चाओं के पाठ के संगीत की समृद्ध परंपरा और प्रणाली वास्तव में संगीत कला के आगामी विकास के लिये मूल सिद्धांत है। यह परिचयात्मक अध्याय संक्षेप में संगीत विरासत के महत्त्व को प्रकाशित

टिप्पणी

करेगा। यह विकास वैदिक काल से वर्तमान काल की विभिन्न अवस्थाओं से गुजरा है। राग, संगीत विधायें, ताल, संगीत वाद्य, स्वर लिपि तथा अन्य क्षेत्रों में बहुमुखी विकास हुआ है।

आजकल हिंदुस्तानी और कर्नाटक संगीत पद्धतियों में परस्पर सम्वाद है। जुगलबंदी एक प्रचलित विचारधारा के रूप में उभर रही है, जिसमें संगीत की दोनों पद्धतियां संगीत प्रेमियों का एक ही मंच पर मनोरंजन करती हैं। कर्नाटक संगीत ने विश्वव्यापी प्रसिद्धी प्राप्त की है। हमारे हमारे संगीतज्ञ संगीत सभा गान तथा विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान प्रदर्शन कर रहे हैं तथा विश्वव्यापी "यूजन संगीत का भाग बन गये हैं। पाश्चात्य स्वर लिपि द्वारा हमारी रचनायें अधिक से अधिक भारत के बाहर लोगों तक पहुंच रही हैं। इन सब आधुनिक रूपों और प्रवृत्तियों के होते हुए भी कर्नाटक संगीत परंपरागत ढांचे के अंतर्गत आध्यात्मिक अंतरधारा में निरंतर बढ़ रहा है।

पाठांत अभ्यास

1. उन तीन कालों का वर्णन कीजिये जिनमें संगीत का अत्यधिक विकास हुआ।
2. 18वीं शताब्दी को संगीत का स्वर्ण युग क्यों कहा जाता है? वर्णन कीजिये।
3. संपूर्ण मेल पद्धति के विषय में विस्तारपूर्वक लिखिये।
4. संगीत में नाट्यशास्त्र के महत्त्व और उसके योगदान का वर्णन कीजिये।
5. पुरंदर दास को कर्नाटक संगीत का पितामह क्यों माना जाता है?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

1.1

1. संगीत में प्राचिन, मध्य तथा आधुनिक काल
2. 13वीं शताब्दी के लगभग भारतीय संगीत हिंदुस्तानी और कर्नाटक प्रणाली, दो भागों में विभाजित हो गया।
3. सप्त स्वर, तीन ग्राम, इक्कीस मूर्छनायें, तीन लय (गति), नव रस, तीन स्थान (सप्तक), 22 श्रुतियां।
4. कुडुमियामलई शिलालेख शास्त्रीय संगीत के आरंभिक प्रमाण हैं।
5. क्योंकि संगीत ग्रंथ संगीत की वृद्धि के मार्ग को प्रकाशित करते हैं तथा भविष्य के लिये लक्ष्य और लक्षणों को सुरक्षित रखते हैं। जैसे-
   1. भरत- नाट्यशास्त्र
   2. मतंग- बृहद्देशी

6. कुतप प्राचीन काल के वाद्य वृंद को कहते हैं।

7. भारतीय संगीत के सप्त स्वर फारसी और अरब देशों से होते हुए पश्चिम पहुंचे और उन्होंने चर्च संगीत को C, D, E, F, G, A, B रूपांतरित नामों के रूप में प्रभावित किया।

1.2

1. हिंदुस्तानी और कर्नाटक संगीत पद्धति का विभाजन सबसे महत्त्वपूर्ण घटना है।

2. उत्तर भारत मुस्लिम शासकों से प्रभावित हुआ तथा उनके राजसी दरबारों में ारसी और अरबी संगीत का प्रभाव पड़ा। इसकी तुलना में दक्षिण भारत अप्रभावित रहा और पारंपरिक हिंदु राजाओं द्वारा प्रोत्साहित होकर वहां शास्त्रीय धारा चलती रही।

3. पुरंदर दास, कबीर दास, मीराबाई

4. क्योंकि भक्ति आंदोलन के सैंकड़ों संत गायकों ने कई रागों तथा प्रादेशिक भाषाओं में रचनायें की जिन्हें लोगों ने बहुत

5. (अ) व्यंकटमखी– चतुरदंडी प्रकाशिका

   (ब) रामामात्य– स्वरमलकलानिधि

6. क्योंकि उन्होंने कर्नाटक संगीत के लिये अत्यधिक वैज्ञानिक क्रमबद्ध मेल पद्धति दी।

7. गोविंदाचार्य ने 72 संपूर्ण मेल पद्धति का प्रचलन किया।

8. गोविंदाचार्य की संपूर्ण मेल पद्धति वर्तमान संगीतज्ञों द्वारा प्रयोग की जाती है।

1.3

1. क्योंकि 18वीं शताब्दी में न केवल हिंदुस्तानी और कर्नाटक संगीत बल्कि पाश्चात्य संगीत में भी अप्रत्याशित विकास और उन्नति हुई। वहां भी संगीत की त्रिमूर्ति का स्वर्ण युग था।

2. रागों का बड़ी संख्या में उद्भव, सरलीकृत ताल पद्धति, विभिन्न विधाओं में बहुत सी रचनाओं का निर्माण और बहुत से उत्तम योग्यता के रचयितओं और म्यूजिकोलोजिस्ट के होने से स्वर्ण युग का आगमन हुआ।

3. पोनिया, मार्गदर्शी शेशा अय्यंगर, मेलत्तुर वीर भदरय्या, वीना कुप्पियर,पल्लवी गोपाल अय्यर तथा अन्य।

4. श्री श्यामा शास्त्री, श्री त्यागराज तथा श्री मुत्तुस्वामी दीक्षितर कर्नाटक संगीत के त्रिमूर्ति के रूप में जाने जाते हैं।

5. जयदेव ने गीतगोविंद की रचना की।
6. प्रहलाद भक्ति विजयम त्यागराज द्वारा रचित ओपेरा है।
7. प्राचीन प्रबंध सभी प्रकार की कर्नाटक संगीत की रचनाओं का उद्गम स्रोत हैं।
8. श्यामा शास्त्री– नवरत्नमालिका

   त्यागराज– घन राग पंचरत्न

   दीक्षितर– नवग्रह कृति

1.4

1. सुब्बराम दीक्षितर बालु स्वामी दीक्षितर के नाती थे। बाद में उन्होंने उन्हें अपने पुत्र के रूप में गोद लिया। उन्होंने संगीत संप्रदाय प्रदर्शिनी लिखी। यह दीक्षितर परंपरा की क्रमबद्धता है।
2. श्यामा शास्त्री के विद्यार्थी– संगीत स्वामी, पंचनाद अय्यर और अन्य।

   त्यागराज के विद्यार्थी– वालाजपेत व्यंकटरमन भागवतर तथा वीना कुप्पियर आदि।

   दीक्षितर के विद्यार्थी– पोनिया, अय्यास्वामी, एत्तयापुरम के राजा आदि।
3. संगीत और ज्ञान का विस्तार करने में इलेक्ट्रोनिक माध्यम में तकनीकी उन्नति, अच्छी छपाई और प्रकाशन तकनीक और संचार नेटवर्क ने अत्यधिक योगदान दिया।
4. सभा गान रूजनता और सभाओं के लिये आधुनिक समय में सभा गान समय बद्ध है। वायलिन और मृदंग दक्षिण भारतीय सभा गान के लिये विशेष संगत के रूप में उभर कर आये।

   शिक्षण प्रणाली, गुरुकुल प्रणाली से संस्थागतध व्यक्तिगत धनिजी शिक्षण में परिवर्तित।

निर्देशित कार्य कलाप

1. प्राचीन काल और आधुनिक काल के संगीत लक्षणों की एक तुल्नात्मक टिप्पणी दीजिये।
2. जब आप किसी रचना को सुनते हैं तो राग का नाम और रचयिता का नाम जानने का प्रयत्न कीजिये।
3. आप के द्वारा अब तक सीखी गई रागों की सूचि बनाइये।

2

कर्नाटक संगीत की मुख्य धारणायें

पूर्व पाठ में हमने भारतीय संगीत के उद्‌गम और विकास के साथ- साथ कुछ प्रमुख व्यक्तित्त्व और रचनाओं के विषय में सीखा। इस पाठ में विद्यार्थी कर्नाटक संगीत की मुख्य धारणाओं और मूल सिद्धांतों से परिचित होंगे।

समकालीन संगीत परिवेश के अनुसार भारतीय संगीत सर्वसम्मत विचारधारा और प्रमाणित सूत्रों के आधार पर अग्रिम अध्ययन के लिये स्थापित हो गया। इस विकास के साथ कई संगीत शास्त्रज्ञों (म्यूजिकोलोजिस्ट) ने कर्नाटक संगीत के विषय में अपनी परिकल्पना और विचारों का उल्लेख किया। भारतीय संगीत के उन विद्यार्थियों को जो कर्नाटक संगीत को व्यक्तिगत और संस्थागत स्तर पर सीख रहे हैं, इन सिद्धांतों और कुछ मूल परिभाषायें सीखनी पड़ती हैं।

इस संदर्भ में नाम प्रणाली तथा मूल धारणायों का ज्ञान अति आवश्यक है।

कर्नाटक संगीत कई आयामों में भिन्न है, जैसे इसका मधुर स्वरूप, गमक का महत्त्व और इसकी तत्काल रचना की क्षमता इत्यादि और सबसे अधिक इसका निर्मल स्वरूप। भारतीय संगीत की रागों ने गूढ़ तथा अति प्रभावशाली ताल पद्धति की भांति अपनी असीमित सृजनशीलता से पश्चिम को सदैव मुग्ध किया है।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी:

- कर्नाटक शास्त्रीय संगीत की मूल शब्दावली का वर्णन कर पायेगा;
- श्रुति और स्वर के अंतर का वर्णन कर पायेगा;
- विभिन्न प्रकार की हार्मनी में अंतर कर पायेगा;
- भिन्न तालों और लयों की पहचान कर पायेगा।

टिप्पणी

2.1 नाद

नाद सांगीतिक धवनि है। यह वह धवनि है जो पर्याप्त समय के लिये एक विशेष आंदोलन संख्या सहित स्थिर रहती है। भारतीय संगीत की इस विशेष धारणा की उत्पत्ति नादब्रह्म से इसके आध्यात्मिक स्वरूप के कारण हुई। 'नाद' शब्द 'नद्यते' से उत्पन्न हुआ है। नाद आहत और अनाहत दो प्रकार का है। अनाहत एक असाधारण मानव धवनि की भांति वर्णित है जो एक साधारण मनुष्य को सुनाई नहीं देती। आहत मानव को सुनाई देती है। उसके उद्गम स्रोत के अनुसार आहत नाद का वर्गीकरण शरीरज, चर्मज, लोहज, वायुज आदि में किया जा सकता है।

पाठगत प्रश्न 2.1

1. नाद क्या है?
2. नाद कितने प्रकार के हैं?
3. नाद शब्द की उत्पत्ति कहां से हुई?
4. उस नाद का नाम बताइये जो साधारण मानव को नहीं सुनाई देता।
5. आहत नाद का वर्गीकरण किस आधार पर किया गया है?

2.2 स्वर

स्वर सांगीतिक नोट है। तकनीकी तौर पर भारतीय संगीत की रागें अथवा मेलडी इन सूक्ष्म तत्त्वों से निर्मित हैं। विद्वानों द्वारा स्वर शब्द इस प्रकार परिभाषित किया गया है:

स्वतो रंजयति श्रोतृचित्तानां स स्वर उच्यते

अर्थात, स्वर वह है जो श्रोताओं के हृदय का मनोरंजन करने में सक्षम है। स्वर संख्या में सात हैं जो सामुहिक रूप से सप्त स्वर जाने जाते हैं। वे इस प्रकार हैं:

क्रम सं	स्वर	संक्षिप्त रूप
1	षड्ज	स
2	ऋषभ	रि
3	गंधार	ग
4	मध्यम	म
5	पंचम	प
6	धैवत	ध
7	निषाद	नि

इनमें से प्रत्येक स्वर भिन्न आंदोलन संख्याओं के बढ़ते क्रम में गाया जाता है। ये आंदोलन संख्यायें अथवा स्थान जिस पर ये गाये जाते हैं उन्हें स्वरस्थान कहते हैं। यद्यपि कुल मिलाकर सात स्वर हैं, षड्ज और पंचम को छोड़कर संपूर्ण पांच स्वरों की एक और आंदोलन संख्या अथवा स्वरस्थान की अवस्था है जिससे कुल मिलाकर बारह स्वरस्थान बनते हैं। ये सामुहिक रूप से द्वादश स्वर स्थान के नाम से जाने जाते हैं। ये हैं:-

1.	षड्जं	स
2.	शुद्ध ऋषभं	रि1
3.	चतुश्रुति ऋषभं	रि2
4.	साधारण गंधारं	ग1
5.	अंतर गंधारं	ग2
6.	शुद्ध मध्यमं	म1
7.	प्रति मध्यमं	म2
8.	पंचमं	प
9.	शुद्ध धैवतं	ध1
10.	चतुश्रुति धैवतं	ध2
11.	कैशिकी निषादं	नि1
12.	काकली निषादं	नि2

पाठगत प्रश्न 2.2

1. कुल कितने स्वर हैं?
2. स्वर के आंदोलन संख्या के स्थान का नाम बताइये।
3. कुल कितने स्वरस्थान हैं?
4. द्वादश स्वरस्थान क्या है?
5. स्वर शब्द का विवरण दीजिये।

2.3 श्रुति

श्रुति स्वर मानों का सबसे छोटा अंतराल है (दो आंदोलन संख्याओं के मध्य का अंतर) जो प्रशिक्षित कान द्वारा ही मालूम होता है। यह प्राचीन संगीत विदों द्वारा इस प्रकार परिभाषित है:-

टिप्पणी

श्रवणेंद्रीय ग्रह्यत्वाद् ध्वनिरेव श्रुतिर्भवेत्

दूसरे शब्दों में श्रुति और स्वर एक सिक्के के दो पक्ष हैं। प्राचीन समय से विद्वानों के बीच इन दोनों के विषय में विवाद समानांतर रहा है। कई संगीत विदों का मानना है कि आंदोलन संख्या की ध्वनि **श्रुति** कहलाती है। जब वह संगीत वाद्यों पर बजती है और जब कोई शब्दों के साथ गाता है तो **स्वर** कहलाती है।

आंदोलन संख्याओं के इन अंतरों के आकार के अनुसार श्रुतियों का तीन प्रकार से वर्गीकरण किया गया है:-

- सबसे छोटा प्रकार जिसे **न्यून श्रुति** कहते हैं
- मध्य प्रकार जिसे **प्रमाण श्रुति** कहते हैं
- सबसे बड़ा प्रकार जिसे **पूर्ण श्रुति** कहते हैं

यद्यपि सभी म्यूजिकोलोजिस्ट द्वारा श्रुतियों की कुल संख्या 22 मानी गयी है; इस संदर्भ में विचारों में अंतर भी है। **'भरत'** प्रथम म्यूजिकोलोजिस्ट थे जिन्होंने अपने प्रयोग में श्रुतियों की कुल संख्या बता कर उनके भिन्न नामों का उल्लेख किया।

पाठगत प्रश्न 2.3

1. श्रुति क्या है?
2. कुल कितने प्रकार की श्रुतियां हैं?
3. श्रुतियों की कुल कितनी संख्या है?
4. श्रुतियों पर प्रयोग करने वाला कौन सा प्रथम म्यूजिकोलोजिस्ट है?
5. श्रुति और स्वर के मध्य अंतर बताइये।

2.4 स्थायीध स्थान

भारतीय संगीत में षड्ज और निषाद का अंतराल या विस्तार स्थान (कर्नाटक पद्धति में स्थायी) कहलाता है। इस स्थान में सात स्वर जैसे षड्ज, ऋषभ, गंधार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद और स्वरस्थान के अन्य प्रकार सम्मिलित हैं। सप्त स्वरों का यह विस्तार **'मध्य स्थान'** के रूप में जाना जाता है।

सप्त स्वरों का अगला विस्तार जो निषाद के पश्चातषड्ज से आरंभ होता है उसे **तार स्थान** कहते हैं। सप्त स्वरों का अगला विस्तार जो तार स्थान के ऊपर है उसे **अति तार स्थान** कहते हैं।

टिप्पणी

मध्य स्थान के नीचे सप्त स्वरों के विस्तार को **मंद्र स्थान** कहते हैं और इसके नीचे के स्थान को **अनुमंद्र स्थान** कहते हैं।

इस प्रकार कुल पांच स्थान हैं। मानव धवनि के विस्तार के मध्य में केवल तीन स्थान हैं। केवल संगीत वाद्य ही इन पांच स्थानों तक सरलता से पहुंच सकते हैं।

पाठगत प्रश्न 2.4

1. स्थायी/स्थान शब्द का वर्णन कीजिये।
2. कुल कितने स्थान हैं?
3. मानव ध्वनि कितने स्थानों तक पहुंच सकती है?
4. वादक कितने स्थानों तक पहुंच सकते हैं?

2.5 गमक

स्वरस्य कंपो गमकः श्रोतृचित्त सुखावः

अर्थात स्वर का कंपन श्रोता के मन को आनंद प्रदान करता है। स्वर से जुड़े सूक्ष्म अलंकारों को गमक कहते हैं। ये कंपन या तौर- तरीके जो स्वर समुदायों तथा राग को सौंदर्य प्रदान करते हैं भारतीय संगीत के विशेष गुण हैं। कई संगीत विदों ने विभिन्न प्रकार के गमक बताये हैं तथा उनकी संख्या में भी अंतर होता रहता है।

संगीत रत्नाकर में निम्नलिखित 15 गमक बताये गये हैं:-

1. तिरुपं
2. स्फुरितं
3. कंपितं
4. लीनं
5. आंदोलितं
6. वली
7. त्रिभिन्नं
8. कुरुलं
9. आहतं

टिप्पणी

10. उल्लासितं

11. प्लवितं

12. हुंफितं

13. मुद्रितं

14. नामितं

15. मिश्रितं

इसके अतिरिक्त कोहल 13 गमक और अहोबल पारिजात में 17 गमक बताते हैं। कर्नाटक संगीत में संगीतज्ञ आजकल दशविध गमक मानते हैं।

पाठगत प्रश्न 2.5

1. गमक से आप क्या समझते हैं?
2. संगीत रत्नाकर के अनुसार कुल कितने गमक हैं?
3. कोहल के अनुसार कुल कितने गमक हैं?
4. संगीत पारिजात के अनुसार कुल कितने गमक हैं?

2.6 मेल

संगीत सप्तक जिनमें नई राग अथवा मेलडी बनाने की क्षमता है उन्हें मेल कहते हैं। 'मेल' शब्द का साहित्यिक अर्थ है स्वर का संयोग। विजयनगर सम्राज्य के आचार्य विद्यारण्य ने कर्नाटक संगीत की मेल पद्धति आरंभ की। उन्होंने प्रसिद्ध और प्रमुख मेलडी जो उस समय प्रचलित थीं उन्हें एकत्र करके मेल नाम दिये। इस क्रम में उनके परवर्ती संगीतज्ञों ने अपने समय की प्रमुख मेलडी को एकत्र करके मेल के नाम दिये और मिलते-जुलते रागों को उनमें लाकर जन्य रागों का नाम दिया।

2.6.1 72 मेल परियोजना

व्यंकटमखी ने कर्नाटक संगीत शब्दावली में विद्यमान स्वरस्थानों में 4 काल्पनिक स्वर जैसे षटश्रुति ऋषभं (साधारण गंधारं), शुद्ध गंधारं, (चतुश्रुति ऋषभं) षटश्रुति धैवतं (कैशिकी निषादं) तथा शुद्ध निषादं (चतुश्रुति धैवतं) को मिलाकर स्वर स्थानों में क्रम परिवर्तन और मिश्रण करके 72 मेल परियोजना का गठन करके प्रमुख परिवर्तन किया।

टिप्पणी

2.6.2 षोडश स्वर स्थान

क्रम सं	नाम
1.	षड्ज
2.	शुद्ध ऋषभ
3.	चतुश्रुति ऋषभ
4.	साधारण गंधार
5.	अंतर गंधार
6.	शुद्ध मध्यम
7.	प्रति मध्यम
8.	पंचम
9.	शुद्ध धैवत
10.	चतुश्रुति धैवत
11.	कैशिकी निषाद
12.	काकली निषाद
13.	शुद्ध गंधार (काल्पनिक स्वर)
14.	षटश्रुति ऋषभ (काल्पनिक स्वर)
15.	शुद्ध निषाद (काल्पनिक स्वर)
16.	षटश्रुति धैवत (काल्पनिक स्वर)

गोविंदाचार्य (1857 ई.) ने व्यंकटमखी द्वारा परिकल्पित पूर्व असंपूर्ण मेल पद्धति की कमियों को दूर करके 72 मेल परियोजना बनाई जो हम आजकल मानते हैं। उन्होंने सप्तकों के मेलों की भांति समझे जाने के लिये कुछ नियम रखे जो इस प्रकार हैं:

- सप्तक में सातों स्वर होने चाहिये।
- यह षड्ज से आरंभ होकर उच्च सप्तक में षड्ज पर समाप्त होना चाहिये, अत: कुल आठ स्वर बनते हैं।
- स्वरों को उचित आरोह और अवरोह क्रम में होना चाहिये।
- स्वरों की समरूप विशेषता मेल में पूर्ण रूप से बनाये रखनी चाहिये।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 2.6

1. मेल से आप क्या समझते हैं?
2. कर्नाटक संगीत में मेल का विचार कौन लाया?
3. 72 मेल परियोजना को किसने विचारात्मक बनाया?
4. उस संगीत विद का नाम बताइये जिसने 72 मेल परियोजना को परिवर्तित किया।
5. मेल की विशेषतायें क्या हैं?

2.7 राग

राग भारतीय संगीत की केंद्रीय धारणा है। मतंग ने अपनी उदाहरण सहित ख्रति 'बृहद्देशी' में राग की धारणा का सर्वप्रथम परिचय दिया है। उन्होंने राग को इस प्रकार परिभाषित किया हैरू

स्वर वर्ण विशेषेण धवनि भेदेना वह: पुन
राज्यते येन कथित स राग सम्मतसतम।

कोई भी मधुर संगीत रचना जो स्वर समुदायों अथवा विभिन्न भावनाओं द्वारा श्रोताओं का मनोरंजन करती है उसे राग कहते हैं। राग एक लघु मधुर संगीत रचना है जो मेल या जनक सप्तक अथवा स्वर समष्टि से उत्पन्न हुई है। यह लघु रचना अपनी जनक स्वर समष्टि से भिन्न है तथा जनक सप्तक से स्वरस्थान बदलकर अथवा आरोहन या अवरोहन में कोई स्वर छोड़कर अथवा वक्र रूप से बढ़ने से एक भिन्न अस्तित्त्व रखती है। इस प्रकार जनक स्वर समष्टि से नई रागों की उत्पत्ति की संभावना अनंत है। अपने भिन्न स्वरों में विभिन्न गमकों और अलंकारों को जोड़कर एक प्रकार के स्वरों और स्वर समष्टि के साथ भिन्न प्रकार की रागें हैं ।

2.7.1 राग वर्गीकरण

कर्नाटक संगीत के रागों का वर्गीकरण उनके प्रस्तुत करने के ढंग के अनुसार कई प्रकारों में विभाजित किया है। विभिन्न संगीत विदों ने भिन्न कालों में रागों के भिन्न वर्गीकरण किये हैं। विशेष संगीत रचनाओं को काम में लेने के तरीकों के अनुसार ये वर्गीकरण उन कालों के लिये उपयुक्त थे।

वर्तमान कर्नाटक रागों का वर्गीकरण निम्नलिखित है:

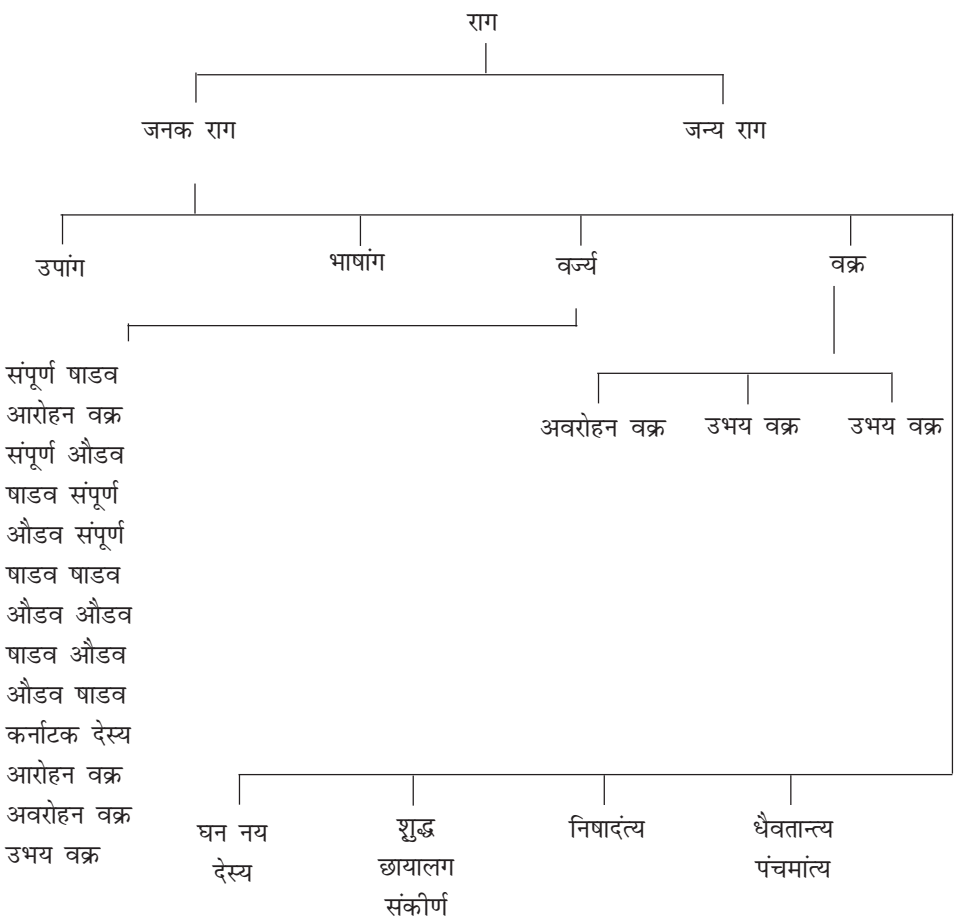

रागों का वर्गीकरण मुख्यतया दो– **जनक राग और जन्य राग** में किया गया है। जनक रागें अपनी पैत्रिक राग का सप्तक अक्षुण रखती हैं परंतु अपने मधुर सौंदर्य के लिये गमक और अन्य प्रकार की गतियां जोड़ देती हैं। जन्य रागों का वर्गीकरण कई प्रकार से किया गया है, यथारू

2.7.2 उपांग और भाषांग

1. उपांग रागें वे हैं जो केवल अपने पैत्रिक सप्तक अर्थात मेल के स्वरों को सम्मिलित करती हैं।

2. भाषांग रागें वे हैं जो अपने मेल के स्वरों के अतिरिक्त स्वरों को भी सम्मिलित करती हैं।

2.7.3 षाडव, औडव, स्वरांतर, सम्पूर्ण षाडव, षाडव सम्पूर्ण, सम्पूर्ण औडव और औडव संपूर्ण

1. षाडव : जिसके सप्तक में केवल 6 स्वर होते हैं।

टिप्पणी

2. औडव : जिसके सप्तक में केवल 5 स्वर होते हैं।
3. स्वरांतर : जिसके सप्तक में केवल 4 या 3 स्वर होते हैं।
4. सम्पूर्ण षाडव : जिसके आरोह में सारे और अवरोह में केवल 9 स्वर होते हैं।
5. षाडव सम्पूण : जिसके आरोह में केवल 6 स्वर और अवरोह में सारे स्वर होते हैं।
6. सम्पूर्ण औडव : जिसके आरोह में सारे और अवरोह में केवल 5 स्वर होते हैं।
7. औडव संपूण : जिसके आरोह में केवल क्र स्वर और अवरोह में सारे स्वर होते हैं।

2.7.4 घन, नय, देस्य

1. घन: जो स्वभाव से गौरवपूर्ण, स्पंदनशील तथा तीव्र गति युक्त स्वर समुदायों सहित होते हैं।
2. नय: जो अत्यंत विस्तृत और शास्त्रीयता से भरपूर होते हैं।
3. देस्य: जो अत्यंत आनंददायक, शांत और प्रस्तुत करनेमें सरल होते हैं।

2.7.5 शुद्ध, छायालग, संकीर्ण

1. शुद्ध : जिनकी किसी अन्य मधुर संगीत रचना या मेलडी से समानता नहीं होती है।
2. छायालग : जिनकी प्रगति में किसी अन्य राग के अंश होते हैं।
3. संकीर्ण : जो अत्यधिक गहन होते हैं क्योंकि इनका संबंध कई रागों से होता है।

2.7.6 कर्नाटक और देस्य

1. कर्नाटक: जिनकी उत्पत्ति और विकास देशज होती है।
2. देस्य: जो हिंदुस्तानी पद्धति या किसी अन्य संगीत पद्धति से लिये गये होते हैं।

2.7.7 निषादंत्य, धैवतान्त्य और पंचमांत्य

1. निषादंत्य: इस राग का सप्तक आरोह में मध्य स्थान के निषाद तथा अवरोह में मंद्र स्थान के निषाद पर समाप्त होता है।
2. धैवतान्त्य: इस राग का सप्तक आरोह में मध्य स्थान के धैवत तथा अवरोह में मंद्र स्थान के धैवत पर समाप्त होता है।
3. पंचमांत्य: इस राग का सप्तक आरोह में मध्य स्थान के पंचम तथा अवरोह में मंद्र स्थान के पंचम पर समाप्त होता है।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 2.7

1. राग से आप क्या समझते हैं?
2. जन्य राग क्या है?
3. रागों का मुख्य रूप से कितने शीर्षकों में वर्गीकरण है?
4. स्वर संख्या के अनुसार रागों का वर्गीकरण किस प्रकार किया गया है?
5. परस्पर मेलडी की समानताओं के अनुसार रागों का वर्गीकरण किस प्रकार किया गया है?

2.8 ताल

ताल भी भारतीय संगीत की एक निजी विशेषता है। यह संगीत की गति को नियंत्रित करने की एक विधि है जो चक्रीय प्रक्रिया में हाथों के संकेतों के द्वारा संकलित की जाती है।

कालो लघुनादिमितय क्रियाया
सम्मितो मतिं गीतादेर विदधत्ताल

यद्यपि प्रत्येक देश के संगीत की अंतर्धारा में गति या लय निहित है, भारतीय संगीत भिन्न प्रकार की बाह्य अभिव्यक्ति सहित अद्वितीय है।

2.8.1 ताल दश प्राण

दश प्राण या दस तत्त्वों के अनुसार ताल की सही गणना के लिये दोनों हाथों का मिलाना या अलग करना ताल की परिभाषा है। ये दस तत्त्व काल, मार्ग, क्रिया, अंग, ग्रह, जाति, कला, लय, यति और प्रस्तार हैं।

2.8.2 षडंग

ताल के छह मुख्य तत्त्व होते हैं जिन्हें सामुहिक रूप से षडंग कहते हैं। ये अनुद्रुतं, द्रुतं, लघु, गुरु, प्लुतं और काकपदं हैं। ये छह अंग अपने चिह्न और अक्षर काल (समय अवधि) की गणना की विधि सहित निम्नलिखित हैं:

क्रम सं	अंग	चिह्न	अक्षर काल	गणना की विधि
1.	अनुद्रुतं	◡	1	एक ताली
2.	द्रुतं	○	2	एक ताली और एक संकेत
3.	लघु	1	3,4,5,7,9	एक ताली और अंगुलि पर गणना

टिप्पणी

क्रम सं	अंग	चिह्न	अक्षर काल	गणना की विधि
4.	गुरु	8	8	एक सशब्द लघु और एक निशब्द लघु
5.	प्लुतं	1 8	12	एक ताली, एक कृष्य और एक सर्पिणी
6.	काकपदं	+	16	एक ताली, एक पताका, एक ख्रष्य और एक सर्पिणी

2.8.3 सूलादि सप्त ताल

आरंभ से ही भारतीय संगीत 108 तालों की विधि का अनुसरण कर रहा है, जिसमें प्रथम पांच तालें मार्गी तालें मानी जाती हैं और शेष 103 तालों को देसी ताल कहते हैं। अहोबल द्वारा रचित संगीत ग्रंथ संगीत पारिजात में हम सर्वप्रथम मूल सात ताल अथवा सूलादि सप्त ताल की विचारधारा से अवगत होते हैं। इस प्रकार कर्नाटक संगीत की अलग ताल पद्धति का कर्नाटक संगीत के पितामह संत पुरंदरदास द्वारा महत्त्व दिया गया। उन्होंने इन सात मूल तालों में सरल अलंकारं और अन्य रचनाओं जिन्हें सूलादि कहते हैं का संयोजन किया। ये सात ताल और उनका विवरण निम्न रूप से है:

क्रम सं	ताल	अंग	अक्षर काल	
1.	ध्रुव	लघु- द्रुतं- लघु- लघु	14	(I_4 ° I_4 I_4)
2.	मथ्य	लघु- द्रुतं- लघु	10	(I_4 ° I_4)
3.	रूपक	द्रुतं- लघु	6	($0I_4$)
4.	झंपा	लघु-अनुद्रुतं-द्रुतं	10	(I_7UO)
5.	त्रिपुट	लघु- द्रुतं- द्रुतं	7	(I_3 00)
6.	अता	लघु- लघु- द्रुतं- द्रुतं	14	(I_5 I_5 00)
7.	एका	लघु	4	(I_4)

पाठगत प्रश्न 2.8

1. ताल शब्द की परिभाषा दीजिये।

2. आज से पहले की जो ताल पद्धति प्रचलित थी उसका नाम लिखिये।

टिप्पणी

3. सप्त ताल की विचारधारा कौन लाया?

4. सप्त तालों का प्रयोग किसने आरंभ किया?

5. किसी एक ताल में कितने अंग होते हैं?

आपने क्या सीखा

भारत विविध संस्कृतियों का देश है जो सभी संप्रदायों के संगीत का प्रयोग करता है। इसकी जड़ें वैदिक मंत्रों में हैं जिनका विकास सदियों से होते हुए वर्तमान कर्नाटक और हिंदुस्तानी संगीत पद्धतियों के रूप में हुआ। भारतीय संगीत की कई विशेषतायें हैं जैसे श्रुति, गमक, राग, ताल इत्यादि। इसका आरंभ और अंत नाद के ज्ञान से होता है क्योंकि संपूर्ण संगीत नादोपासना है। भारतीय संगीत की एक और विचारधारा नादोपासना के द्वारा ईश्वर की उपासना है, जहां संगीतज्ञ मुक्ति प्राप्त करने के साधन की भांति स्वयं को शुद्ध संगीत के प्रति पूर्णतया समर्पित करता है।

नाद की पूजा या नादोपासना श्रुति और स्वर को आत्मसात करने में सहायक है जो केवल सूक्ष्म अंतर सहित प्राय: समरूप हैं। भारतीय संगीत पद्धति में सात स्वर हैं जो विभिन्न आंदोलन संख्याओं में गाये जाते हैं। इन्हें स्वरस्थान कहते हैं। भारतीय संगीत में हम मेलडी के सिद्धांतों का अनुकरण करते हैं अर्थात धुन बनाने के लिये एक स्वर के पश्चात दूसरे स्वर का क्रमिक प्रयोग होता है। स्वरों के विभिन्न विनिमय और मिश्रण से भिन्न रागें बनती हैं। ये रागें गमक- तौर तरीके और अलंकारों के साथ गाई या बजाई जाती हैं जो भारतीय संगीत को विशेष और ऐश्वर्यपूर्ण बनाती हैं। कर्नाटक संगीत में रचनायें मुख्यतया धार्मिक और कई तालों अर्थात विभिन्न लयों के चक्रीय रूपों में बद्ध होती हैं।

पाठांत अभ्यास

1. कर्नाटक संगीत में नाद की धारणा को संक्षेप में समझाइये।

2. सात स्वरों और उनके प्रकारों की विस्त्रित व्याख्या कीजिये।

3. रागों के वर्गीकरण का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये।

4. ताल की धारणा तथा उसके प्रकारों के विषय में लिखिये।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

2.1

1. नाद एक विशेष आंदोलन संख्या सहित सांगीतिक धवनि है जो पर्याप्त समय के लिये स्थिर रहती है।

टिप्पणी

2. दो

3. नद्यते

4. अनाहत

5. आहत नाद का वर्गीकरण उसके उद्‌गम स्रोत के अनुसार हुआ है।

2.2

1. सात

2. स्वरस्थान

3. 12

4. स्वरस्थानों की संख्या बारह है इसलिये इन्हें द्वादशस्वरस्थान कहते हैं।

5. यह सांगीतिक नोट है।

2.3

1. श्रुति स्वर आघात का सबसे छोटा अंतराल है या दो आंदोलन संख्याओं के मध्य का अंतर जिसे कान से सुना जा सके।

2. तीन प्रकार

3. 22

4. भरत

5. आंदोलन संख्या की ध्वनि को श्रुति कहते हैं तथा शब्दों के साथ गाने पर स्वर कहते हैं।

2.4

1. भारतीय संगीत में षड्‌ज और निषाद का अंतराल या विस्तार स्थान कहलाता है।

2. संख्या में पांच

3. 3 स्थान

4. संपूर्ण 5 स्थान

2.5

1. स्वर से जुड़े सूक्ष्म अलंकारों को गमक कहते हैं।

2. 15 गमक

3. 13 गमक

4. 17 गमक

5. 10 गमक

2.6

1. संगीत सप्तक जिनमें नई राग अथवा मेलडी बनाने की क्षमता है उन्हें मेल कहते हैं।

2. विद्यारण्य

3. व्यंकटमखी

4. गोविंदाचार्य

5. मेल की मूल विशेषतायें ये हैं कि सप्तक में सातों स्वर षड्ज से आरंभ होकर उच्च सप्तक में षड्ज पर समाप्त होने चाहिये, अत: कुल आठ स्वर बनते हैं। ये आरोह और अवरोह क्रम में होने चाहिये और उनमें स्वरों की समरूप विशेषता होनी चाहिये।

2.7

1. राग एक लघु मधुर संगीत रचना है जो मेल या जनक सप्तक अथवा स्वर समष्टि से उत्पन्न हुई है। यह लघु रचना अपनी जनक स्वर समष्टि से भिन्न है तथा जनक सप्तक से स्वरस्थान बदलकर अथवा आरोहन या अवरोहन में कोई स्वर छोड़कर अथवा वक्र रूप से बढ़ने से एक भिन्न अस्तित्त्व रखती है।

2. जन्य राग एक लघु मधुर संगीत रचना है जो मेल या जनक सप्तक अथवा स्वर समष्टि से उत्पन्न हुई है।

3. दो- जनक और जन्य

4. षाडव, औडव, स्वरांतर और सम्पूर्ण

5. शुद्ध, छायालग और संकीर्ण

2.8

1. ताल संगीत की गति को नियंत्रित करने की एक विधि है जो चक्रीय प्रक्रिया में हाथों के संकेतों के द्वारा संकलित की जाती है।

2. 108 ताल पद्धति

टिप्पणी

3. अहोबल
4. संत पुरंदरदास
5. 6

निर्देशित कार्य कलाप

1. पैत्रिक सप्तक के साथ आरोहन और अवरोहन सहित विभिन्न प्रकार के रागों को मालूम करने का प्रयत्न कीजिये।
2. प्रत्येक ताल की अवधि और गणना के तरीके को मालूम कीजिये।

3

प्रमुख रचयिताओं की जीवनियाँ

कर्नाटक संगीत कई सदियों से होते हुए महान कला रूप की भांति विकसित हुआ है। हमारे संगीत के विकास में प्रतिभाशाली रचयिताओं का महत्त्वपूर्ण योगदान है। महान रचयिताओं ने उपयुक्त धुनों और लयों से युक्त सुंदर भाषा में गीत बनाये जिनसे संगीतज्ञों ने संगीत सभाओं की शोभा बढ़ाई। मूल गीत स्थिर थे जबकि तत्क्षण संगीत में परिवर्तन होता रहा। इन्हें कृति या कीर्तन कहते हैं जो सामान्यतया देवताओं की प्रशंसा में राग के आकार या रूप में रचे गये। इन गीतों के रचयिताओं को वग्गेयकार (वाक्य-गेय-कार, जिसका अर्थ है शब्द- संगीत-उत्पादक) कहते हैं। इस अध्याय में हम इनमें से कुछ संगीत रचयिताओं, उनके जीवन और कार्य का अध्ययन करेंगे। जिन रचयिताओं के विषय में हम जानकारी प्राप्त करेंगे वे हैं पुरंदर दास, भद्रचल रामदास, संगीत त्रिमूर्ति, स्वाति तिरुनल और पपनसम सीवन।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात विद्यार्थी:

- रचयिता को पहचानकर उनके नाम बता पायेगा;
- कुछ गीतों के रचयिताओं को पहचान पायेगा;
- प्रसिद्ध (सूचिबद्ध) रचयिताओं के योगदान का विवरण दे पायेगा;
- उनके गीत की पृष्ठभूमि और महत्त्व का वर्णन कर पायेगा;
- संगीत और रचयिता को उचित संदर्भ में रख पायेगा;
- रचनाओं के ज्ञान का विकास कर पायेगा।

3.1 पुरंदर दास

पुरंदर दास (1484-1564) का जन्म एक धनाढ्य व्यापारी, वरदप्पा के यहां श्रीनिवास नायक

टिप्पणी

के नाम से पुरंदरगर्दा (महाराष्ट्र) में हुआ। वे भली-भांति शिक्षित तथा कन्नड़, संस्कृत और आध्यात्मिक संगीत में पारंगत थे। उनकी पत्नी, सरस्वती बाई बहुत धार्मिक थीं। वे एक साहुकार बन गये और नव कोटि नारायण के नाम से जाने जाते थे। वे एक बहुत ही कृपण मनुष्य थे परंतु जब एक ब्राह्मण ने उन्हें सरस्वती बाई की नथ ला कर दी जो उन्हें दान में मिली थी फिर भी उनकी पत्नी के पास ही थी, तो वे सुधर गये। वे अपना धन और लोभ छोड़कर एक चारण बन गये और घूम-घूम कर धर्म और दान का उपदेश गाते हुए देते थे। विजयनगर राज्य में बहुत घूम कर ईश्वर की प्रशंसा करके अच्छे व्यवहार और सद्गुण की शिक्षा देते हुए उनकी 80 वर्ष की आयु में हंपी में मृत्यु हो गई। जब वे 40 वर्ष के थे तो व्यासतीर्थ ने उन्हें पुरंदर दास नाम देकर दीक्षित किया।

उन्हें संगीत पितामह- संगीत के पितामह- के रूप में जाना जाता है। उन्होंने मायामालवगौल राग, जिसका हम अनुकरण करते हैं, के आधार पर संगीत शिक्षण को व्यवस्थित किया। उन्होंने सरली, जनतई, वरीसई, अलंकार, गीत, उगभोग, सूलादि और कीर्तन रचे। प्राय: बोलचाल की भाषा, दैनिक जीवन की समीक्षा और लोक धुनों को काम में लेते हुए उनके गीत 'देवरनं' कहलाते हैं, जिन्हें वे करताल की ताल और तंत्री वाद्य के साथ गाते थे। सरल धुन और लय में बद्ध, वे भक्ति, नैतिकता और करुणा का उपदेश देते हैं। इनमें गजेंद्र मोक्ष, प्रहलाद आदि धार्मिक ग्रंथ तथा कथाओं के कई प्रसंग अनेक चरणं सहित सरल धुनों में मिलते हैं। उनके गीतों के माध्यम से हम उन्हें सामान्य मनुष्य की भांति दृश्य, ध्वनि, भोजन और उनके अनुभवों का आनंद लेते हुए देखते हैं। उदाहरण के लिये उन्होंने पयसं, बीज, पौधा, पुष्प, फूल आदि शब्दों का प्रयोग किया है। कहा जाता है की उन्होंने 475000 गीतों की रचना की है जिनमें से 1000 उपलब्ध हैं। ये कन्नड़ भाषा में हैं, जबकि इनके हस्ताक्षर (मुद्रा) पुरंदर विठ्ठल हैं। उनके कई शिष्य थे जिन्होंने उनके संगीत का प्रचार किया।

पाठगत प्रश्न 3.1

1. पुरंदर दास का आरंभिक नाम क्या था?
2. उनकी रचनायें क्या कहलाती हैं?
3. उन्होंने कौनसी भाषा में गीतों की रचना की?
4. उनकी संगीतात्मक मुद्रा क्या थी?

3.2 भद्रचल रामदास

भद्रचल रामदास (1620-1688) तेलुगू भाषी थे तथा उनका एक धार्मिक युगल लिंगन्ना और

कामंबा के यहां जन्म हुआ था, जो नलकोंडपल्ली गांव में रहते थे। उनका नाम गोपन्ना रखा गया। एक शांत बालक जो सदा रामनाम गाता था, उन्होंने अपना सारा धन अकाल और सूखे के समय जरूरतमंदों में बांट दिया। किंवदंती के अनुसार एक मुस्लिम फकीर ने उन्हें रामनाम में दीक्षित किया तथा उन्हें रामदास नाम दिया। उनके क्षेत्र के शासक अबु हसन कुतुबशाह (तनीष) थे जिनके लिये गोपन्ना के चाचा अकन्न और मदन्न ने राजधानी गोलकोण्डा में मुख्य मंत्रियों की भांति काम किया। उनकी सहायता से इन्हें भद्रचल, एक प्रसिद्ध पवित्र नगर जहां पर राम के मंदिर की स्थिति अच्छी नहीं थी, में तहसीलदार का पद प्राप्त हुआ। रामदास दान एकत्र करते थे और राज कोष से भी कुछ धन लेकर मंदिर की मरम्मत करवाते थे। नवाब ने उन्हें गबन के आरोप में 12 वर्ष के लिये जेल भेज दिया। रामलक्ष्मण ने तनीष को सपने में यह बताया कि रामदास निर्दोष है और मंदिर की मरम्मत जनता की सेवा। रामदास को मुक्त कर दिया गया, उन्हें पेंशन और भद्रचल के पास का क्षेत्र मंदिर के रखरखाव के लिये दान में दे दिया गया। रामदास की पत्नी कमलांबा थीं और उनका पुत्र रघुराम था।

पुरंदर दास की भांति रामदास ने अपने आराध्य का वर्णन और उसकी आराधना के लिये सरल लोक धुनों और आसान भाषा का प्रयोग किया। उन्होंने गीतों को बहुत कठिन नहीं बनाया जिससे साधारण लोग उन्हें समझ सकें और सामुहिक भजनों के अंतर्गत गा सकें। उनके गीतों में रामनाम का बारंबार दोहराना और हस्ताक्षर 'भद्रचल' दिखाई देता है। वे मुख्यतया तेलुगु में हैं परंतु उनमें संस्त्रत के कई शब्द हैं। पुरंदर दास और रामदास दोनों ने बाद के कई रचयिताओं, विशेषतया त्यागराज, को प्रेरणा दी जो रामदास की भक्ति का अपनी रचनाओं में उल्लेख करते हैं। रामदास के कीर्तन पल्लवी और कई चरणं में बद्ध हैं और कांबोधी जैसी परिचित रागों और धुनों में रचे गये हैं। धुनों की तुलना में शब्दों पर अधिक जोर दिया गया है। दक्षिण भारत में संपूर्ण भजन मंडलियों में उनके गीत सम्मिलित होते हैं जो समूह गान के लिये पूर्ण रूप से उपयुक्त हैं।

पाठगत प्रश्न 3.2

1. रामदास की देशी भाषा क्या थी?
2. उनके गीतों में बार-बार किसका नाम आता है?
3. प्रसिद्ध राम मंदिर कहां था जिसकी उन्होंने मरम्मत करवाई?

3.3 संगीत त्रिमूर्ति

यह एक आश्चर्यजनक संयोग है कि कर्नाटक संगीत के तीन सबसे महान रचयिताओं ने तमिलनाडु

टिप्पणी

के एक ही नगर में प्राय: एक ही समय जन्म लिया। वह प्रसिद्ध नगर तिरुवरूर तंजौर जिले में है जहां इनका जन्म हुआ और वह सभी संगीत प्रेमियों के लिये तीर्थ स्थान है।

3.3.1 श्यामा शास्त्री– वरिष्ठतम– 26 अप्रैल 1762 में विश्वनाथ अय्यर, जो कांचीपुरम से आये हुए तेलुगु पुजारियों के वंशज थे, के यहां इनका जन्म हुआ। इनके पिता तुलजा के दरबार में कार्यरत थे। इनका नाम व्यंकटसुब्रमणियं रखा गया व इनकी पुजारी बनने के लिये शिक्षा हुई। एक संगीत सन्यासी ने इन्हें संगीत और संभवत: तांत्रिक उपासना (देवी पूजा) में दीक्षित किया। तत्पश्चात इनका संपर्क पच्चीमिरयं अदियपैया (वीरिबोनी के लिये प्रसिद्ध) से हुआ। इनके गीतों में सरल पद होते हैं परंतु उनका लय संतुलन जटिल होते हुए भी सुंदर होता है। इनकी लगभग 300 कृतियां उपलब्ध हैं जो अधिकतर तेलुगु में हैं जिनमें श्यामाकृष्ण हस्ताक्षर प्रयुक्त हुआ है। वे एक सरल और सुविधापूर्ण तरीके से रहने वाले गृहस्थ थे। उनके सबसे बड़े बेटे पंजु शास्त्री को उनके लेख और रचनायें विरासत में मिलीं। उनका छोटा बेटा सुब्बरय्या शास्त्री एक अच्छा रचयिता था। विदित होता है कि श्यामा शास्त्री ने अधिक यात्रा नहीं की क्योंकि वे अपने संगीत और उपासना में लीन रहते थे। अपनी पत्नी की मृत्यु का शोक मनाते हुए कुछ दिनों पश्चात 6 फरवरी 1827 में इनकी मृत्यु हो गयी।

3.3.2 त्यागराज– का जन्म 1767 में एक तेलुगु भाषी रामा ब्राह्मण के घर में हुआ जो अत्यंत प्रतिभाशाली माने जाते थे, रामायण पर प्रवचन देते थे तथा राम तारक मंत्र में दीक्षित थे। कथनानुसार उनके तीसरे पुत्र के जन्म की भविष्यवाणी तिरुवरूर के प्रमुख देव ने उनके माता पिता से की थी, जिन के नाम पर बालक का नाम त्यागराज रखा गया। तत्पश्चात पवित्र कावेरी नदी के किनारे तिरुवयुरु में तंजौर शासक द्वारा दिये गये घर में परिवार रहने लगा। ग्राम प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर है और त्यागराज ने अपनी कृतियों 'सारी वेदलिन' (आसावरी) और 'मुरीपेमु' (मुखारी) में इसका उल्लेख किया है। उनका पूर्ण ध्यान उपासना और ध्यान में होने के कारण त्यागराज के अपने सहोदरों के साथ संबंध अच्छे नहीं थे। उन्होंने पहले पार्वती से और उनकी मृत्यु के पश्चात कनकंबा से विवाह किया। इनकी इकलौती पुत्री सीतालक्ष्मी ने कुप्पुस्वामी से विवाह किया जिनके पुत्र त्यागराज की नि:संतान ही मृत्यु हो गयी। सन्यास लेने के पश्चात इस संत की मृत्यु 1847 में हुई।

त्यागराज संस्कृत, तेलुगु और ज्योतिष शास्त्र में शिक्षित एक महान योगी थे। उन्होंने प्रसिद्ध गायक सोंती व्यंकटरमनय्या से गायन और वीणा की शिक्षा ली। त्यागराज के गीतों में शास्त्रीय सौंदर्य, योगिक दृष्टि, भक्ति और संगीतात्मक निपुणता है। पुरंदर दास की भांति वे बिना सत्यनिष्ठ उपासना के केवल बाहरी धार्मिक कर्म कांडों के अनुसरण की आलोचना करते हैं। वे रामदास और पोतना के प्रशंसक थे। त्यागराज की कृतियों में अत्यंत विविधता है। हमें उनकी रचनाओं में सरल मेलडी, कोमल लय, पंचरत्न, भक्ति का

भावनात्मक प्रदर्शन, विस्त्रित विवरण, करुणा के लिये सरल निवेदन, ये सब मिलता है। उत्सव संप्रदाय और दिव्यनामा जैसे गीतों में विस्त्रित संगति सहित जटिल राग, लोक संगीत और भजन गीत, तीन ओपेरा- प्रहलाद भक्ति विजयम, नौका चरित्रम और श्री सीता राम विजयम उनकी प्रतिभा के प्रमाण हैं। यद्यपि अधिकतर गीत तेलुगु में हैं, कई संस्कृत में भी हैं। उनके ईष्ट देवता राम थे, परंतु वे गणेश, शिव, देवी इत्यादि के गीत उसी सहजता से गाते थे। संगीत और नाद पर उनके गीत उनकी कला के सिद्धांत और अभ्यास के विचारों को प्रदर्शित करते हैं। इस समूह के तीन रचयिताओं में से इनके गीतों में सबसे अधिक विविधता है। क्योंकि इनके बहुत शिष्य थे, इनका संगीत बहुत प्रसिद्ध और भविष्य के लिये सुरक्षित है।

आज तक इनकी शिष्य परंपरा से प्रतिभाशाली संगीतज्ञ हमें प्राप्त हैं।

3.3.3 मुत्तुस्वामी दीक्षितर (1775-1835)- तिरुवरूर के सुब्बम्मा और रामास्वामी दीक्षितर के पुत्र थे जो स्वयं एक पारंगत संगीतज्ञ थे और व्यंकट वैद्यनाथन द्वारा शिक्षित थे जिन्होंने स्वयं 17वीं शताब्दी के म्यूजिकोलोजिस्ट व्यंकटमखी के विद्यालय से शिक्षा प्राप्त की जिनकी परंपरा का उनके परिवार ने अनुकरण किया। रामास्वामी अपने परिवार के साथ मनाली (मद्रास के पास) चले गये जहां वे दरबारी संगीतज्ञ थे। एक संत चिदंबरनाथ योगी ने मुत्तुस्वामी को बनारस की तीर्थ यात्रा के समय अपना शिष्य बनाया, उन्होंने उत्तर भारत में कई स्थानों का भ्रमण किया और उन्होंने दर्शन शास्त्र, तंत्र और संस्व्रत का अध्ययन लगभग 9 वर्ष तक अध्ययन किया। दो विवाह करने पर भी इन्हें सांसारिक जीवन में दिलचस्पी नहीं थी। उन्होंने गुरुगुहा को अपना हस्ताक्षर प्रयुक्त करते हुए तिरुत्तनी मंदिर से आरंभ करते हुए कई देवताओं पर गीतों की रचना की। उनका संपूर्ण जीवन तीर्थयात्रा करते हुए 1835 की दीपावली के दिन एट्यापुरम में समाप्त हुआ। उनके सुंदर गीत देवताओं के नाम की माला की भांति तथा देव स्तुति लगभग मंत्रों की भांति होते हैं और संगीत की कोमल गमकों का प्रदर्शन उनके वीणा वादन की धीमी तथा सुंदर गति की झलक है। हमें उनके संगीत और भाषा का ज्ञान मध्यमकला साहित्य के विशेष प्रयोग के द्वारा पता चलता है जो धीमी गति वाली कृतियों से अलग दिखाई देता है। इन्होंने शास्त्रीय छंद, अनुप्रासों सहित कई अर्थों वाले वाक्यों या शब्दों का प्रयोग किया है, स्त्रोतोवह तथा गोपुच्छा यति का प्रगतिशील अधिक या कम उपयोग किया है, साथ ही रचनाओं में रागों के नाम एवं उनकी अपनी मुद्रा को गूंथा है जिससे वे छंदमय के स्थान पर साहित्यिक अधिक हैं। संगीतात्मक उपलब्धि के अतिरिक्त उनकी तीर्थ यात्राओं के मंदिर और देवताओं के वर्णन तथा विभक्ति कृति में संस्कृत वाक्यों का परिवर्तित रूप तथा व्याकरण के विभिन्न प्रकार दिखाई देते हैं। कृतियों का स्थल या देवता समूह, रागों के उप-समूह जिनके नामों के अंतिम भाग में समानता है, सहित व्यवस्थित करना, ये सब एक ऐसे व्यक्ति का परिचय देते हैं जो अपने सिद्धांतों को अभ्यास में लाने में परिपूर्ण और सुव्यवस्थित है।

वे अपने भाइयों चिन्नस्वामी और बालुस्वामी के अतिरिक्त एक अन्य शिष्यों के समूह से जुड़े थे जो बाद में तंजौर कौर्टेट के रूप में प्रसिद्ध हुआ। उन्होंने वायलिन के प्रयोग के अतिरिक्त उनकी ख्रतियों का प्रचार किया। दीक्षितर ने कुछ हिंदुस्तानी रागों का प्रयोग किया तथा कुछ सरल 'नोट्टुस्वर' के लिये पाश्चात्य मेलडी के समूह का भी प्रयोग किया। अपने संगीत के अभ्यास में पारंगत

होते हुए भी दीक्षितर और परिवार ने विभिन्न प्रकार के संगीत और संस्कृति से परस्पर आदान-प्रदान किया। उनके भाई के पौत्र सुब्बराम दीक्षितर ने 1904 में 'संगीत संप्रदाय प्रदर्शिनी' को संकलित और प्रकाशित किया जिसमें आरंभिक काल से 20वीं शताब्दी तक के संगीत और रागों को जोड़ा गया है। परिवार और शिष्य परंपरा ने उनके गीतों का प्रचार किया जो 21वीं शताब्दी में भी स्पंदनशील और जीवित हैं।

पवित्र नगर तिरुवरूर में भक्त माता पिता के यहां जन्म लेना, धर्म, संगीत और संस्कृत के ज्ञान की पृष्ठभूमि तथा विशेष दैवीय आशीर्वाद के पश्चात जन्म होने से प्रतीत होता है कि जन्म से ही वे त्रिमूर्ति से संबन्धित हैं। संत गुरुओं के शिष्य की भांति स्वीकृत, विशेष धार्मिक विद्या या नाम उपासना में दीक्षित, पूर्ण रूप से संगीत के माध्यम से आध्यात्मिक मार्ग के लिये समर्पित व शिष्यों और समकालीनों द्वारा सम्मानित होना वास्तव में एक आश्चर्यजनक कथा है। प्रत्येक को अपने अंत का पूर्वाभास था अत: अपने जीवन की तीर्थयात्रा धैर्यपूर्वक समाप्त की। इनके निवासों की मरम्मत करके भविष्य के लिये सुरक्षित किया गया है तथा इनकी स्मृति का प्रत्येक वर्ष संगीत उत्सवों के माध्यम से मनाया जाता है। श्यामा शास्त्री के गीत देवी पर हैं जबकि त्यागराज और दीक्षितर के गणेश से लेकर हनुमान तक के गीत हमारे धर्म और पौराणिक ज्ञान की वृद्धि करते हैं।

पाठगत प्रश्न 3.3

1. संगीत त्रिमूर्ति के नाम दीजिये।
2. श्यामा शास्त्री का प्रारंभिक नाम क्या है?
3. त्रिमूर्ति रचयिताओं में सबसे अधिक रचनाओं के प्रकार किसके हैं?
4. एक पवित्र स्थान के मंदिर पर गीतों के समूह का क्या नाम है?

3.4 स्वाति तिरुनल

स्वाति तिरुनल (1813-1847) त्रावणकोर की रानी लक्ष्मी बाई और राजराजा वर्मा कोईथमपुरण की दूसरी संतान थे। उनका 16 अप्रैल 1813 में 'स्वाति' नक्षत्र में जन्म हुआ। उनकी बड़ी बहन रुक्मणी बाई और छोटा भाई मर्तंड वर्मा थे जिनके जन्म के पश्चात उनकी माता की मृत्यु हो गई। 1929 में उनके राज्य के शासक के रूप में भार संभालने तक उनकी मां की छोटी बहन गौरी पार्वती बाई ने राज्य तथा बच्चों का शासक रानी की भांति पालन किया। उनकी मौसी और पिता ने उन्हें भली भांति शिक्षित किया। सात वर्ष की आयु तक उन्होंने तमिल, संस्कृत और अंग्रेजी

तथा बाद में कन्नड़, तेलुगु, हिंदी, मराठी और कई अन्य भाषाओं में निपुणता प्राप्त की।

सुब्रमण्य भगवतर और पद्मनाभ भगवतर से उन्होंने संगीत सीखना आरंभ किया और कई महान संगीतज्ञों जैसे तंजौर कौर्टेट, महाराष्ट्र गायक, शदकल गोविंद मरार और त्यागराज तथा दीक्षितर के कई शिष्य जो उनके दरबार में गाते थे, उन्हें सुना, उनसे सीखा और प्रभावित हुए। ईस्ट इंडिआ कंपनी के साथ संपर्क ने उन्हें अपने राज्य का आधुनिकरण करने के लिये प्रेरित किया। उन्होंने वेधशाला, संग्रहालय, चिड़िया घर, प्रेस, पुस्तकालय और एक अंग्रेजी विद्यालय (अब विश्वविद्यालयी कौलेज) आरंभ किये। उन्होंने कानूनी सुधार किये, भूमि निरीक्षण के लिये न्यायालय स्थापित किये, 1836 में पहली बार राज्य में जनगणना की, एलोपैथिक डाक्टरों के साथ अस्पतालों की स्थापना की, इंजीनियरों का विभाग आरंभ किया और महिलाओं के लिये सामाजिक सुधार किये। उनकी मौसी तथा पालक माता ने उन्हें विभिन्न क्षेत्रों में ज्ञान की वृद्धि के लिये प्रोत्साहित किया। निकट परिवार में से उनके भाई मर्तंड वर्मा ने उनके बाद 1846 से 1860 तक शासन किया।

अपनी पत्नी की मृत्यु के पश्चात स्वाति तिरुनल ने एक गायक और वीणा वादक, लक्ष्मी से विवाह किया। दूसरी पत्नी के पुत्र हुआ और उसकी बहन ने शासक के भाई से विवाह किया। तीसरी पत्नी के साथ उनके संबंध अच्छे नहीं थे, पारिवारिक मतभेदों का मद्रास उच्च न्यायालय में निवारण हुआ। स्वाति तिरुनल केरल के त्रावणकोर राज्य के कुलशेखर वंश से संबंधित थे। उनके कई महल तथा ऐश्वर्य होते हुए भी वे एक विनम्र भक्त थे। वे स्वयं को भगवान पद्मनाभ को समर्पित राज्य को चलाने वाला सेवक मानते थे। इस प्रकार उनकी कृतियों मां वे भगवान पद्मनाभद्ध या उनके पर्याय की मुद्रा काम में लेते हैं और भगवाण विष्णु की महत्ता का वर्णन करते हैं। 32 वर्ष की अल्प आयु में उन्होंने सैंकड़ों गीत न केवल संस्कृत और मनिप्रवल, अपितु कई अन्य भाषाओं में भी लिखे। उनकी रचनाओं में दो संगीत ओपेरा, वर्णम्, कृति, स्वरजाति, पदम्, जावली, हिंदुस्तानी ध्रुपद, ख्याल, टप्पा, ठुमरी और भजन सम्मिलित हैं। उनका दरबार संगीत और संगीतज्ञों से भरपूर था और उनके नवरात्रि कीर्तनों से लेकर उनके स्पंदनशील हिंदी तिल्लाना तक उनकी रचनायें कर्नाटक कोष का एक महत्त्वपूर्ण भाग हैं।

पाठगत प्रश्न 3.4

1. रामा वर्मा स्वाति तिरुनल के नाम से कैसे प्रसिद्ध थे?
2. उन्होंने अपनी कृतियों में नामाक्षर की भांति किस मुद्रा का प्रयोग किया है?
3. इनकी मुद्रा क्या है?

आपने क्या सीखा

इस अध्याय में हमने कुछ महत्त्वपूर्ण कर्नाटक रचयिताओं के विषय में सीखा है। पुरंदर दास, एक धनाढ्य कृपण, परिवर्तित होकर एक महान भक्त बन जाते हैं। स्वाति तिरुनल ने एक राजकुमार की भांति जन्म लिया परंतु अपनी सरलता तथा भक्ति और संगीत के प्रति समर्पण के लिये जाने जाते हैं। उन्होंने अपने सारे धन का प्रयोग प्रजा की भलाई के लिये किया। महान भक्त रामदास ने सारा धन जो उन्हें सौंपा गया था उसे धार्मिक इमारतों को सुधारने के काम में लिया। त्यागराज एक धार्मिक भ्रमण करने वाले गायक की भांति दान मांगते थे जैसे पुरंदर दास ने परिवर्तन के पश्चात किया। श्यामा शास्त्री और दीक्षितर को धन की कोई चिंता नहीं थी और उन्होंने अपनी पूर्ण शक्ति ईश्वर की सेवा में लगा दी। उन्होंने अपना संपूर्ण ज्ञान, धन और संगीतात्मक उपलब्धि ईश्वर की प्रशंसा के लिये काम में ली। उनकी रचनायें गान और भक्ति के रस के उदाहरण हैं जो यह दिखाते हैं कि संगीत और भक्ति इस पृथ्वी पर सबसे बड़ा धन है।

पाठांत अभ्यास

1. एक अच्छे कर्नाटक संगीत रचयिता के लिये आवश्यक गुणों पर संक्षिप्त निबन्ध लिखिये।
2. कर्नाटक रचयिताओं को अपने साहित्य को संपन्न बनाने के लिये महाकाव्य, पुराण और अन्य संदर्भ सामग्री से प्राप्त उपयोगी ज्ञान के विषय में संक्षेप में विवरण दीजिये।
3. यद्यपि वह एक महान गायक न भी हो, एक रचयिता के लिये संगीत और पद मिलाने तथा उपयुक्त राग में बद्ध करने के लिये किन गुणों की आवश्यकता है?
4. दीक्षितर की ङ्कङ्क ख्रतियों के साहित्यिक सौंदर्य और अलंकरण के कुछ उदाहरणों के नाम दीजिये।

शब्दावली

1. वाग्गेयकार– शब्द और संगीत का रचयिता
2. मातु– गीत का साहित्य या पद
3. धातु– संगीत
4. मुद्रा– वह शब्द जो रचयिता का नाम या धार्मिक स्थान या राग जो पद में बुद्धिमत्तापूर्ण रूप से बताया गया है।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

3.1

1. श्रीनिवास नायक

2. देवरनं
3. कन्नड़
4. पुरंदर विठ्ठल

3.2

1. तेलुगु
2. रामा
3. भद्रचलं

3.3

1. श्यामाशास्त्री, त्यागराज, मुत्तुस्वामी दीक्षितर
2. व्यंकटसुब्रमणियं
3. श्यामाशास्त्री
4. क्षेत्र कृतियां

3.4

1. उनके जन्म नक्षत्र स्वाति के कारण
2. पद्मनाभद्ध या पर्यायऋ
3. पद्मनाभ

निर्देशित कार्य कलाप

1. त्रिमूर्ति की और अधिक रचनाओं को औडियो सी डी या कैसेट अथवा सभा संगीत को सुनकर सीखिये।
2. शास्त्रीय त्रिमूर्ति द्वारा संगीत के प्रयोग का तुलनात्मक अध्ययन कीजिये।

4

अभ्यास गान का परिचय

(सरली वरीसई से स्वरजाति तक)

भारतीय संगीत को सीखने के लिये इसके सूक्ष्म तत्त्वों को समझना और सराहना अत्यंत आवश्यक है। अत: एक उचित शिक्षा प्रणाली की योजना बनाना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है जो विद्यार्थी को संगीत के लययुक्त और स्वरयुक्त दोनों पक्षों में प्रवीणता प्राप्त कराने में सक्षम हो। कर्नाटक शास्त्रीय संगीत का वर्गीकरण अभ्यास गान- अभ्यास के लिये संगीत और सभा गान- सभाओं में संगीत प्रस्तुति के अंतर्गत किया गया है। अभ्यास गान संगीत में मूल अध्याय हैं जो विद्यार्थी को संगीत कला के आधारभूत ज्ञान से परिचित कराते हैं। अभ्यास गान में सरली वरीसई, जनता वरीसई, हेच्चु स्थान वरीसई, तग्गु स्थान वरीसई, दातु वरीसई, अलंकार गीत, जातिस्वर, स्वरजाति और वर्ण अध्याय सम्मिलित हैं। इन तकनीकी रूपों का जब मौखिक और वाद्य दोनों में अभ्यास किया जाता है तो विद्यार्थी को श्रुति, स्वर और लय ज्ञान प्राप्त करने में सहायता मिलती है। परंतु अभ्यास गान के समूह में सम्मिलित वर्ण अपनी आवाज या वाद्य बजाने के लिये हाथों को गर्म करने के लिये सभा गान के आरंभ में भी प्रस्तुत किये जाते हैं। रचनाओं में कृतियां, राग मालिका, पद, जावली, कीर्तन, तिल्लाना, राग, तान, पल्लवी इत्यादि के मेलडी रूप सम्मिलित हैं।

श्री पुरंदर दास ने, जिन्हें कर्नाटक संगीत का पितामह कहा जाता है, कर्नाटक संगीत के मूल अध्यायों को संगठित किया। उन्होंने राग मायामालवगौल के मूल अध्यायों को सूत्रित किया। कटपयदी सूत्र में राग की पारिभाषिक शब्दावली के लिये 'माया' शब्द बाद में लगाया गया परंतु तब तक इसे मालवगौल ही कहते थे। राग मायामालवगौल एक संपूर्ण राग है। यह 15वां मेल है। इस जनक राग के स्वर हैं: षड्ज (स), ऋषभ ($री_1$), अंतर गंधार ($ग_3$), शुद्ध मध्यम ($म_1$), पंचम (प), शुद्ध धैवत ($ध_1$), काकली निषाद ($नि_3$)। स्वरों के क्रमानुसार रूप से चढ़ने को आरोहन कहते हैं और स्वरों के उतरने के क्रम को अवरोहन कहते हैं।

आरोहन : स री ग म प ध नि सं

अवरोहन : सं नि ध प म ग री स

चूंकि स्वर के प्रत्येक जोड़े का अंतर, यथा सरी- गम- पध- निस समान है, एक प्राथमिक विद्यार्थी को सरगम प्रस्तुत करने में सरलता होगी। अत: यह राग कर्नाटक

संगीत की आरंभिक राग बन गई। हिंदुस्तानी संगीत की राग बिलावल (कर्नाटक संगीत की राग शंकराभरण के समतुल्य) अभ्यास गान में प्रयुक्त होती है।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात शिक्षार्थी:

- उचित स्वर स्थानों में स्वरों के प्रकार का वर्णन कर पायेगा
- तीन स्थान तथा विभिन्न गतियों का विवरण कर पायेगा
- स्वरों के विभिन्न प्रतिरूपों का वर्णन कर पायेगा
- उचित ताल और स्वर में रचना लिख पायेगा

4.1 सरली वरीसई

गायन और वाद्य संगीत में सरली वरीसई मूलभूत अभ्यास है। वरीसई राग मायामालवगौल में गाये-बजाये जाते हैं, जो प्राथमिक विद्यार्थी के गायन और वाद्य संगीत सीखने के लिये उचित हैं। इस राग में दो स्वर संवाद हैं, यथा, शुद्ध ऋषभ (री1) तथा शुद्ध धैवत ($ध_1$) और अंतर गंधार ($ग_3$) तथा काकली निषाद ($नि_3$)।

आरोहन : स $री_1$ $ग_3$ $म_1$ प $ध_1$ $नि_3$ सं

अवरोहन : सं $नि_3$ $ध_1$ प $म_1$ $ग_3$ $री_3$ स

यह राग प्राथमिक विद्यार्थियों के सीखने के लिये सरल है क्योंकि स्वर एक दूसरे से संतुलित दूरी पर हैं। यहां पूर्वांग या प्रथम अर्ध तथा उत्तरांग या दूसरा अर्ध समान हैं। यह विद्यार्थी को आसानी से राग प्रस्तुत करने में सहायक है। सरली वरीसई एक सप्तक में मध्य षड्ज से आरंभ होकर तार षड्ज तक हैं। प्रथम अध्याय में संपूर्ण सात स्वर आरोहन में उत्तरोत्तर रूप से हैं जिसके पश्चात वही स्वर अवरोहन में भी हैं। सरली वरीसई का महत्त्वपूर्ण लक्षण उनका क्रम है जिसमें उनकी रचना हुई है। वरीसई क्रमश: बढ़ते हैं जिससे विद्यार्थी स्वरों के मध्य अंतराल के विषय में सीखता है। प्रथम वरीसई प्रगति में नियमित हैं जैसे पहले बताया है। दूसरे वरीसई ऋषभ तक जाते हैं और ऋड्ज तक वापस आते हैं।

स्वरों का अवरोह भाग क्रमश: कम होता है।

टिप्पणी

स रि स रि । स रि । ग म ॥ स रि ग म । प ध । नि सं ॥
सं नि सं नि । सं नि । ध प ॥ सं नि ध प । म ग । रि स ॥

सभी सरली वरीसई में विभिन्न परिवर्तन और संगम सहित स्वरों का सुंदर संयोजन है। कुछ वरीसई में दीर्घ अक्षर जैसे प,य या म, य होंगे जो विद्यार्थी को अपनी धवनि को एक स्थान पर स्थिर करने में सहायक है। ताल पक्ष के अंतर्गत सरली वरीसई आदि ताल में 8 अक्षरकाल युक्त होते हैं। पूर्वांग (पहला भाग) में 4 अक्षरों के साथ 1 लघु और उत्तरांग (दूसरा भाग) में 4 अक्षर और 2 द्रुत होते हैं।

प्रथम अभ्यास में

प्रथम भाग स रि ग म में 1 लघु है अर्थात् 4 अक्षर के साथ अंगुलियों को गिनना। दूसरा भाग प ध 1 द्रुत के साथ और नि सं अन्य द्रुत के साथ है।

(1 द्रुत का अर्थ है एक ताली और एक संकेत जो 2 अक्षरों के बराबर है)

अत: प्रथम सरली वरीसई के आरोहन और अवरोहन दोनों में 8 अक्षर हैं। सरली वरीसई को प्रस्तुत करने की तीन गतियां हैं। प्रथम गति या कला में 1 मात्रा (बीट) के लिये 1 स्वर है।

x 1 2 3 । x √ x √
स रि ग म । प ध । नि सं ॥
सं नि ध प । म ग । रि स ॥

(चिन्ह x ताली को दर्शाता है और 1, 2, 3 हथेली को घुमाना दर्शाता है)

दूसरी गति में 1 मात्रा के लिये 2 स्वर हैं

x 1 2 3 x √ √ x √
स रि ग म प ध नि सं । सं नि ध प । म ग रि स ।

तीसरी गति में 1 मात्रा के लिये 4 स्वर हैं

x 1 2 3 x √ √ x √
सरिगम पधनिसं संनिधप मगरिस । सरिगम पधनिस संनिधप मगरिस ॥

यहां तीसरी गति में पहले अध्याय की प्रस्तुति 2 बार ताल की बनावट को पूरा करने के लिये करनी होगी। राग मायामालवगौल के सरली वरीसई को जानने के बाद विद्यार्थी उन्हीं वरीसई को विभिन्न रागों में जैसे शंकराभरण या खरहरप्रिय में अभ्यास कर सकता है।

टिप्पणी

4.1 जनता वरीसई

अभ्यास गान में सरली वरीसई के पश्चात दूसरे अध्याय में जनता वरीसई होते हैं। जनता का अर्थ द्विगुणित है। इस अध्याय में द्विगुणित स्वर हैं जो विद्यार्थी को द्विगुणित स्वर प्रस्तुत करने में प्रशिक्षित करते हैं। जनता स्वरों में एक स्वर दो बार दोहराया जायेगा जिसमें दूसरे स्वर पर जोर दिया जायेगा। ये सही स्वर स्थान सहित एक ही स्थान पर स्वर को दो बार गाने या वाद्य पर बजाने के लिये विद्यार्थी को योग्य बनाते हैं। ये अध्याय मायामालवगौल राग में भी संयोजित किये गये हैं और आदिताल में बद्ध हैं। जनता वरीसई सरली वरीसई से कुछ अधिक विकसित हैं। यद्यपि पहला अध्याय एक क्रमशः विकास है, जैसे:-

x	1	2	3		x	√	x	√	
स स	रि रि	ग ग	म म	।	प प	ध ध	नि नि	सं सं	॥
सं सं	नि नि	ध ध	प प	।	म म	ग ग	रि रि	स स	॥

बचे हुए अध्यायों में भिन्न सम्मिश्रण हैं। यहां विद्यार्थी सभी अंतराल सीख सकेगा जो एक सप्तक में स्वरों के बीच में होते हैं।

x	1	2	3		x	√	x	√	
स स	रि रि	ग ग	म म		रि रि	ग ग	म म	प प	॥
ग ग	म म	प प	ध ध	।	म म	प प	ध ध	नि नि	॥
प प	ध ध	नि नि	सं सं	।	सं सं	नि नि	ध ध	प प	॥
सं सं	नि नि	ध ध	प प	।	म म	ग ग	रि रि	स स	॥

यहां विद्यार्थी म और रि य प और गय ध और मय नि और पय प और स के बीच अंतराल को सीख सकेगा। विद्यार्थी को सही स्थान ऋषभ पर आना पड़ेगा। जनता वरीसई में ताल गिनती पहली कला में प्रत्येक स्वर के लिये एक क्रिया होगी।

x	x	1	1	2	2	3	3	।	
ससरिरि	गगमम	रिरिगग	ममपप	गगमम	पपधध	ममपप	धधनिनि	।	
x	x	*	*	x	x	*	*		
पपधध	निनिसंसं	संसंनिनि	धधपप	निनिधध	पपमम	धधपप	ममगग	॥	तीसरी गति में

अतः दूसरे अध्याय में विद्यार्थी को प्रस्तुति के लिये पहली गति में ताल का एक आवर्त, दूसरी गति में पूरे अध्याय को दो बार और तीसरी गति में अध्याय को चार बार पूरा करना होता है। जनता वरीसई का कठिन अभ्यास विद्यार्थी को बाद की अवस्थाओं में स्फुरित, तिरिप, आहत इत्यादि गमक गाने के योग्य बनाते हैं।

पाठगत प्रश्न 4.1

1. अभ्यास गान क्या है?
2. सरली वरीसई क्या है?
3. 'जनता' शब्द की परिभाषा दीजिये।
4. अभ्यास गान के लिये किस राग का प्रयोग किया जाता है।
5. कर्नाटक संगीत के मूल अध्यायों को किसने बनाया?

4.3 तार स्थान वरीसई अथवा हेच्चु स्थान वरीसई

सरली और जनता वरीसई जो मध्य सप्तक या स्थान में है सीखने के पश्चात विद्यार्थी भिन्न सप्तक या स्थान में प्रस्तुति करना सीखते हैं। तार स्थान या हेच्चु स्थान का अर्थ उच्च सप्तक है जो तार षड्ज के ऊपर के स्वर हैं। इन वरीसई में स्वरों का व्यवस्थित रूप से क्रमशः विकास उच्च सप्तक स्वरों तक पहुंचता है और अवरोहन क्रम में समाप्त होता है।

प्रथम वरीसई में स्वर तार ऋषभ, दूसरे में तार गंधार और बाद में मध्यम और पंचम तक जाते हैं। तार स्थान स्वर में उस स्वर पर बिंदु लगाते हैं। इन अभ्यासों से विद्यार्थी स्वरों को उच्च श्रेणी में प्रस्तुत करने के योग्य बनता है। सामान्यतया तीन गतियों में 3-4 तार स्थान वरीसई उच्च सप्तक स्वरों को प्रस्तुत करने के लिये सिखाये जाते हैं। ये राग मायामालवगौल में गाये जाते हैं और आदिताल में बद्ध होते हैं।

उदाहरण

x	1	2	3		x	√	x	√		x	1	2	3		x	√		x	√	
स	रि	ग	म	।	प	ध	नि	सं	॥	सं	.	.	.	।	सं	.	।	स	.	॥
ध	नि	स	रिं	।	गं	मं	ग	रिं	॥	सं	रिं	सं	नि	।	ध	प	।	म	प	॥
ध	नि	स	रिं	।	गं	रिं	स	रिं	॥	सं	रिं	सं	नि	।	ध	प	।	म	प	॥
ध	नि	सं	रिं	।	सं	नि	ध	प	॥	सं	नि	ध	प	।	म	ग	।	रि	स	॥

4.4 मंद्र स्थान अथवा तग्गु स्थान वरीसई

मंद्र स्थान अथवा तग्गु स्थान का अर्थ निम्न सप्तक है। मध्य षड्ज के नीचे स्थित स्वर मंद्र स्थान स्वर कहलाते हैं। यहां स्वर व्यवस्थित अवरोह क्रम में होते हैं। पहले वरीसई का मंद्र निषाद, दूसरे का मंद्र धैवत और अंतिम का पंचम तक अवरोह होता है। ये वरीसई आरोह क्रम में तार षड्ज में समाप्त होते हैं। मंद्र स्थान वरीसई नीचे क्रमशः बिंदु लगाकर लक्षित करते हैं और ये अध्याय

टिप्पणी

विद्यार्थियों को निम्न सप्तक स्वर प्रस्तुत करने के योग्य बनाते हैं। समान्यतया तीन गति में 3-4 मंद्र स्थान अभ्यास विद्यार्थी को निम्न सप्तक में प्रस्तुति करना सिखाते हैं।

उदाहरण

x 1 2 3 x √ x √ x 1 2 3 x √ x √

सं नि ध प | म ग | रि स ‖ स . . . | स. | . . ‖

ग रि स नि | ध प | ध नि ‖ स नि स रि | ग म | प म ‖

ग रि स नि | स रि ग म ‖ स रि ग म | प ध | नि सं ‖

4.5 दत्तु वरीसई (वक्र वरीसई)

दत्तु का अर्थ है उछलना अथवा कूदना। दत्तु वरीसई में स्वरों की बनावट इस प्रकार होती है कि क्रम संचार के साथ एक, दो अथवा तीन स्वर व्यवस्थित रूप से उछलते हैं। वरीसई विद्यार्थी को प्रत्येक स्वर स्थान पर अच्छा नियंत्रण करने की शिक्षा में सहायक हैं। दत्तु वरीसई राग मायामालवगौल में हैं और आदिताल में बद्ध हैं। दत्तु वरीसई तीन गतियों में प्रस्तुत किये जाते हैं।

उदाहरण

x 1 2 3 x √ x √ x 1 2 3 x √ x √

स म ग म | रि ग | स रि ‖ स ग रि ग | स रि | ग म ‖

रि प म प | ग म | रि ग ‖ रि म ग म | रि ग | म प ‖

ग ध प ध | म प | ग म ‖ ग प म प | ग म | प ध ‖

म नि ध नि | प ध | म प ‖ म ध प ध | म प | ध नि ‖

प सं नि सं | ध नि | प ध ‖ प नि ध नि | प ध | नि सं ‖

स प ध प | नि ध | सं नि ‖ सं ध नि ध | सं नि | ध प ‖

नि म प म | ध प | नि ध ‖ नि प ध प | नि ध | प म ‖

ध ग म ग | प म | ध प ‖ ध म प म | ध प | म ग ‖

प रि ग रि | म ग | प म ‖ प ग म ग | प म | ग रि ‖

म स रि स | ग रि | म ग ‖ म रि ग रि | म ग | रि स ‖

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 4.2

1. राग मायामालवगौल के विषय में संक्षेप में लिखिये।
2. दत्तु वरीसई कौन सी ताल में बद्ध किये जाते हैं और उसमे कितने अक्षर होते हैं?
3. संगीत में तीन स्थानों के नाम बताइये।
4. दत्तु वरीसई की परिभाषा बताइये।

4.6 अलंकार

अलंकार शब्द का अर्थ अलंखृत करना या सजाना है। अभ्यास गान के क्षेत्र में अलंकार एक विशेष ताल में बद्ध लयात्मक स्वर प्रतिरूपों का समूह है। राग मायामालवगौल में सात अलंकार सूलादि सप्त तालों में बद्ध हैं जिनके नाम धरुव ताल, मत्य ताल, रूपक ताल, झंपा ताल, त्रिपुट ताल, अता ताल और एक ताल हैं।

तीन गतियों में अलंकार सीखना विद्यार्थी के लिये भिन्न स्वर प्रतिरूपों, भिन्न अंगों के साथ अलग ताल और उन्हें काम में लेने की विधि का ज्ञान प्राप्त करने में सहायक है- यह क्रिया है। स्वर प्रतिरूप इस प्रकार रचे जाते हैं कि विद्यार्थी निरंतर प्रगतिशील स्वर को प्रस्तुत करना सीखने के अतिरिक्त आगे और पीछे की गतियों से परिचित भी हो जाते हैं।

सप्त ताल अलंकारों के अंग और उनके चिह्न हैं लघु (।), द्रुत (0) तथा अनुद्रुत (U) जो इस प्रकार हैं:-

1. धरुव ताल में 1 लघु (।), 1 द्रुत (0), 2 लघु (।) (।)
2. मत्य ताल में 1 लघु (।), 1 द्रुत (0), 1 लघु (।)
3. रूपक ताल में 1 द्रुत (0), 1 लघु (।)
4. झंपा ताल में 1 लघु (।), 1 अनुद्रुत (U), 1 द्रुत (0)
5. त्रिपुट ताल में 1 लघु (।), 2 द्रुत (0) (0)
6. अता ताल में 2 लघु (।) (।), 2 द्रुत (0) (0)
7. एक ताल में केवल एक लघु (।) है

उदाहरण

4.6.1 चतुस्र जाति मत्य ताल

अंग: |0| = 4 + 2 + 4 = 10 अक्षर

x	1	2	3		x	√		x	1	2	3	
स	रि	ग	रि	।	स	रि	।	स	रि	ग	म	॥
रि	ग	म	ग	।	रि	ग	।	रि	ग	म	प	॥
ग	म	प	म	।	ग	म	।	ग	म	प	ध	॥
म	प	ध	प	।	म	प	।	म	प	ध	नि	॥
प	ध	नि	ध	।	प	ध	।	प	ध	नि	सं	॥
सं	नि	ध	नि	।	सं	नि	।	सं	नि	ध	प	॥
नि	ध	प	ध	।	नि	ध	।	नि	ध	प	म	॥
ध	प	म	प	।	ध	प	।	ध	प	म	ग	॥
प	म	ग	म	।	प	म	।	प	म	ग	रि	॥
म	ग	रि	ग	।	म	ग	।	म	ग	रि	स	॥

पाठगत प्रश्न 4.3

1. अलंकार क्या होते हैं?
2. अलंकार के लिये कितनी तालों का प्रयोग होता है?
3. सूलादि सप्त तालों का नाम बताइये।
4. सूलादि सप्त तालों के अंग लिखिये।

4.7 गीत

कर्नाटक संगीत के अध्ययन में एक विद्यार्थी को यह मालूम होता है कि गीत सबसे सरल रचना है। मोटे तौर पर इसके दो प्रकार हैं जिन्हें लक्ष्य गीत और लक्षण गीत कहते हैं। जैसा इसके शब्दों से विदित होता है, लक्ष्य गीत प्राथमिक विद्यार्थी को राग के विषय में बताता है जिससे वह इसे राग के प्रतिरूप की भांति रख सकते हैं। लक्षण गीत कई वर्गों जैसे पिल्लरी गीत और संचारी गीत में दिखाई देता है। जैसा की शब्द से विदित होता है पिल्लरी गीत भगवान गणेश के विषय में बताता है जबकी संचारी गीत हिंदु पौराणिक देवी- देवताओं की प्रशंसा में हैं। पुरंदर दास राग मल्हारी में विशेषतया भगवान गणेश के नाम में इन रचनाओं के प्रथम रचयिता हैं। संचारी गीत विभिन्न रागों में हैं जैसे कल्याणी, महन, कांबोजी इत्यादि। उदाहरण के लिये:

टिप्पणी

उदाहरण

रागरू मलहारी **तालः चतुरस्रजाति**

रूपक

15वें मेल मायामालवगौल जन्य

आरोहनः स रि म प ध स

अवरोहनः स ध प म ग रि स

राग मल्हारी में षड्ज और पंचम के अतिरिक्त शुद्ध ऋषभ, अंतर गंधार, शुद्ध मध्यम और शुद्ध धैवत स्वर लिये जाते हैं। इस राग के आरोहन में गंधार वर्ज्य (निष्कासित) है और निषाद आरोहन और अवरोहन दोनों में वर्ज्य है।

x	√		x	1	2	3		x	√			x	1	2	3
म	प	।	ध	सं	सं	रिं	॥	रिं	सं	।	ध	प	म	प	॥
श्री	–		ग	न	ना	थ		सिं	दु		–	र	वर	न	
रि	म	।	प	ध	म	प	॥	ध	प	।	म	ग	रि	स	॥
क	रु		ना	सा	ग	र		क	री		व	द	न	–	
स	रि	।	म,	ग	रि	स	॥	रि	ग	।	रि	स,			॥
लं	–		बो	–	द	र		ल	कु		मी	क	र	–	
रि	म	।	प	ध	म	प	॥	ध	प	।	म	ग	रि	स	॥
अं	–		बा	–	सु	त		अ	म		र	वि	नु		त

लंबोदर लकु मीकर ॥

सिद्धि चरन गनसेवित

सिद्धि विनायक ते नमोनमः ॥ लंबोदर ॥

सकल विद्यादि पूजित

सर्वोत्तम ते नमोनमः ॥ लंबोदर ॥

पाठगत प्रश्न 4.4

1. गीत क्या है?

2. गीत के प्रकारों के नाम बताइये।

टिप्पणी

3. पिल्लरी गीत को किसने रचा था?

4. मल्हारी राग के राग लक्षण बताइये।

राग जगनमोहिनी **त्रिपुट ताल 3+2+2=7**

आरोहन: स ग3 म1 प नि3 सं

आरोहन: सं नि3 प म1 ग3 रि1 स

स , ॥ स ग म । प म । ग . ॥ म ग रि । स रि । स नि ॥
अ रे मु रा रे गरुड़ गमन

प नि सं । ग म । प म ॥ ग रि . । स नि । प नि ॥
सरसी ज न यन ज ग न्ना

स ग रि । स . । स . ॥ स ग , । म , । प प ॥
थु . . रे . रे . अं . ... तर

म ग रि । स ग । म प नि प म। ग म । प म ॥
गं .. धा .. र . का . क ली . स्वर

ग ग रि । स नि । स स ॥ स ग म । प . । नि प ॥
तार शु . द्ध आ रो . . ह

सं नि प । म प । ग म ॥ ग म प । नि प । म ग
रिध व र्जित अव.रो ... ह

स ग , । म . । प प ॥ म ग रि । स रि । * नि ॥
ध . व . र्जित ॥ स ... ग्र ह . न्या .

स ग म । प . । नि प ॥ सं नि प । म प । ग म ॥
स .. . अंश त्रिपुस यु ... क्त

ग म प । नि प । म ग ॥ म नि म । प म । म ग ॥
माया मा लव गौल मे ल

म ग रि । स रि । स नि ॥ प नि स । ग . । रिस ॥
जनित जग न मो .. हि .. नी

स ग म । प नि । सं सं ॥ नि प म । ग रि । सनि ॥
माधव ..राय श्री रा म..

स ग . । रि . । स . ॥
नमो न मो

4.7.1 लक्षण गीत

लक्षण गीत गीतों का दूसरा रूप हैं। यदि संचारी गीत देवताओं की प्रशंसा में होते हैं, तो लक्षण

टिप्पणी

गीत एक राग की विशेषताओं का वर्णन करते हैं। साहित्य भाग में राग के नाम, उसकी जनक राग (यदि यह जन्य राग है), राग में प्रयोग किये जाने वाले स्वरों का वर्णन, यदि वक्र है या वर्ज्य, उसके ग्रह, अंश और न्यास स्वर, यहां तक कि ताल जिसमें गीत की रचना की गई है उसका भी उल्लेख किया जायेगा। प्राचीन समय में जब स्वरलिपियां उपलब्ध नहीं थीं, लक्षण गीत विद्यार्थियों को राग लक्षण याद करने में सहायक होते थे। श्री गिविंदाचार्य और पैदल गुरुमूर्ति शास्त्री ने कई लक्षण गीतों की रचना की, उदाहरण के लिये राग जगनमोहिनी लक्षणरू त्रिपुट ताल

4.8 जाति स्वर

जाति स्वर अभ्यास गान से संबंधित एक संगीत विधा है जिसे गीत के पश्चात सिखाया जाता है। जाति स्वर में केवल स्वर समुदाय होते हैं जो जाति पदों के प्रारूप हैं अतः उन्हें जाति स्वर कहा जाता है। स्वरों का मिश्रण जनता, दत्तु इत्यादि से बना है जो मध्यम और विलंबित काल में हैं। ये रचनायें केवल स्वर पदों से बनी हैं और स्वर पल्लवी भी कहलाती हैं। जाति स्वर ह्रस्व और दीर्घ दोनों स्वरों से निर्मित हैं और इन रचनाओं के लिये साहित्य नहीं है परंतु ये वाक्यांश मृदंग जति जैसे कई प्रारूपों से निर्मित हैं। जाति स्वर में पल्लवी और कई स्वर हैं। चरणों में विभिन्न दत्तु हैं। इनकी नृत्य सभाओं में भी प्रस्तुति होती है। जाति स्वर के गान क्रम में पल्लवी के पश्चात चरण आते हैं तथा प्रत्येक चरण के अंत में पल्लवी दोहराई जाती है।

सामान्यतया जाति स्वर आदि, रूपक ताल परंतु कभी-कभी अन्य सूलादि ताल और चप्पु ताल में भी बद्ध होते हैं। साधारणतया वे सामान्य और रक्ति रागों परंतु बहुत कम दुर्लभ रागों में रची जाती हैं। कुछ जाति स्वरों में चरणों में भिन्न गतियों का प्रयोग होता है।

4.9 स्वर जति

स्वर जति अभ्यास गान से संबंधित एक संगीत विधा है जिसे स्वर और साहित्य सहित जाति स्वरों के पश्चात सिखाया जाता है। स्वर जति में कुछ विभाग हैं जो पल्लवी, अनुपल्लवी और चरण कहलाते हैं। चरणों में विभिन्न धातु हैं। सभी चरण एक ही लंबाई के या क्रमशः बढ़ते हुए हो सकते हैं। सभी रचनाओं में साहित्य होता है और प्रायः एक स्वर वाक्यांश के लिये एक साहित्य वाक्यांश होगा। स्वर जति जाति सहित नृत्य रूप की भांति उत्पन्न हुई है।

सामान्यतया पल्लवी के साहित्य की प्रस्तुति के पश्चात चरणों के स्वर और साहित्य दोनों की प्रस्तुति होती है और प्रत्येक चरण के पश्चात पल्लवी को दोहराया जाता है। यहां प्रयुक्त राग और ताल जाति स्वर के समान होती हैं। स्वर हस्व और दीर्घ दोनों स्वरों का मिश्रण है। दीर्घ स्वर के लिये साहित्य एक वाक्यांश या दीर्घ अक्षर के लिये एक आकार या उकार हो सकता है। यह विद्यार्थी को अगला अभ्यास- वर्ण, आसानी से प्रस्तुत करने में सहायता प्रदान करता है। विशेष रूप से श्री श्यामा शास्त्री द्वारा रचित कुछ स्वर जति बहुत उच्च स्तर की हैं और वे सभाओं में प्रस्तुत की जाती हैं। सामान्यतया साहित्य भक्ति या वीरता संबंधी होगा।

उदाहरण: जति स्वर

रागः **हंसधवनि**

ताल: रूपक

29वें मेल धीर शंकराभरण की जन्य राग

आरोहन: स रि ग प नि सं

अवरोहन: सं नि प ग रि स

षड्ज और पंचम के अतिरिक्त हंसधवनि में चतुश्रुति ऋषभ, अंतर गंधार और काकली निषाद होते हैं। यह एक वर्ज्य राग है। मध्यम और धैवत वर्ज्य स्वर हैं। यह औडव राग है, अर्थात आरोहन और अवरोहन में पांच स्वर हैं।

पल्लवी

स , ॥ स नि प ग ॥ रि स ॥ , नि प नि ॥ स , । स ,रिस ॥ ग , । ग , । रि ग प नि ॥

चरण

1. स , । रि नि , स ॥ प , । नि सं , रिं ॥ सं , । नि प , ग ॥ रि , । ग प , नि ॥ स , ॥

2. प नि । स रि ग प ॥ नि सं । रि ग प नि ॥ गरि । सं नि प ग ॥ रि स । रि ग प नि ॥ सं , ॥

3. ग प । रि ग स रि ॥ स नि । प , प , ॥ नि सं । रि ग प नि ॥ सं रिं । सं , सं , ॥
   ग रि । सं नि सं रिं ॥ सं नि । प , प , ॥ रिं सं । नि प सं नि ॥ प ग । रि ग प नि ॥ सं ,

4. सं , । , , सं , ॥ , , । सं रिं सं नि ॥ प , । , , प , ॥ , , । स नि प ग ॥
   र , । , , रि , ॥ , , ॥ ग र स नि ॥ सं , ॥ , , स , ॥ , , । र ग प न ॥
   सं , । , र ग र ॥ स न । प न स र ॥ नि , ॥ , स र स ॥ न प । ग प न स ॥
   रि स । , नि पग ॥ नि प ॥ , ग रि स ॥ नि स ॥ , रिग प ॥ ग प । , नि सं रिं ॥ सं ,

पाठगत प्रश्न 4.5

1. जाति स्वरों का वर्णन कीजिये।
2. जाति स्वर कौन सी गति में गाये जाते हैं?
3. स्वर जति क्या है? संक्षेप में बताइये।
4. हंसध्वनि किस मेल से ली गई है?

टिप्पणी

आपने क्या सीखा

कर्नाटक संगीत शिक्षा के लिये अभ्यास गान एक आवश्यक भाग है जहां एक विद्यार्थी सरली वरीसई, जनता वरीसई, दत्तु वरीसई, मंद्र, तार स्थान वरीसई और अलंकार जैसे अभ्यासों को करता है। ये अभ्यास विद्यार्थी को उच्च स्तर के गायन की योग्यता प्रदान करते हैं। गीतं, स्वर जति, जाति स्वर जैसे अन्य रूप राग जिसमें वे रचे गये हैं और भिन्न तालों के लयात्मक ज्ञान के विषय में बताते हैं। इन रूपों का संगीत आचार्यों को भी प्रस्तुतिकरण में शुद्धता लाने के लिये अभ्यास करना आवश्यक है।

पाठांत अभ्यास

1. अभ्यास गान संगीत में मौलिक पाठ है– समझाइये।
2. दो अभ्यासों सहित सरली वरीसई संज्ञा के विषय में समझाइये।
3. जनता वरीसई पर एक अनुच्छेद लिखिये।
4. हेच्चु स्थान वरीसई और तेग्गु वरीसई में क्या अंतर है?
5. अभ्यासों सहित अलंकारों का वर्णन कीजिये।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

4.1

1. अभ्यास गान संगीत में मौलिक पाठ है।
2. गायन और वाद्य संगीत में सरली वरीसई मूल अभ्यास हैं।
3. जनता का अर्थ दुगुना है। इन अभ्यासों में दुगुने स्वर होते हैं।
4. मायामालवगौल
5. संत पुरंदर दास

4.2

1. मायामालवगौल एक संपूर्ण राग है। यह 15वीं मेल राग है। इसमें षड्ज, शुद्ध ऋषभ, अंतर गंधार, शुद्ध मध्यम, पंचम, शुद्ध धैवत, काकली निषाद हैं।

2. आदि ताल 8 अक्षर काल

3. मंद्र- मध्य- तार स्थान

4. दत्तु का अर्थ है व्यवस्थित रूप से एक या दो स्वरों का उछलना या कूदना।

4.3

1. अलंकार एक विशेष ताल में बद्ध लयात्मक स्वर प्रतिरूपों का समूह हैं।

2. अलंकारों के लिये सूलादि सप्त तालों का प्रयोग होता है।

3. धरुव, मत्य, रूपक, झंपा, त्रिपुट, अता और एक

4. धरुव- 1 लघु, 1 द्रुत, 2 लघु

   मत्य- 1 लघु, 1 द्रुत, 1 लघु

   रूपक- 1 द्रुत, 1 लघु

   झंपा- 1 लघु, 1 अनुद्रुत, 1 द्रुत

   त्रिपुट- 1 लघु, 2 द्रुत

   अता- 2 लघु, 2 द्रुत

   एक- 1 लघु

4.4

1. गीत एक सरल रचना है। यह अलंकारों के पश्चात सिखाई जाती है।

2. पिल्लरी गीत, संचारी गीत, लक्षण गीत

3. संत पुरंदर दास

4. यह मायामालवगौल की जन्य है। स्वर स्थान- षड्ज, शुद्ध ऋषभ, अंतर गंधार, शुद्ध मध्यम, पंचम, शुद्ध धैवत। यह एक औड़व- षाड़व राग है। आरोहन में गंधार और निषाद वर्ज्य हैं और अवरोहन में निषाद वर्ज्य है।

4.5

1. जाति स्वर अभ्यास गान से संबंधित एक संगीत विधा है जिसे गीत के पश्चात सिखाया जाता है। जाति स्वर में केवल स्वर समुदाय होते हैं जो जाति पदों के प्रारूप हैं।

2. मध्यम और विलंबित काल

टिप्पणी

3. स्वर जति अभ्यास गान से संबंधित एक संगीत विधा है जिसे स्वर और साहित्य सहित जाति स्वरों के पश्चात सिखाया जाता है।

4. धीर शंकराभरण

निर्देशित कार्य कलाप

1. सभी सरली रूप जो क्रियात्मक विभाग में दिये गये हैं उनका गति की तीसरी श्रेणी में करें।

2. विद्यार्थियों के लिये सुझाव है कि सभी जनता वरीसई का अभ्यास गति की तीसरी श्रेणी में करें।

3. तार स्थान- मंद्र स्थान- दत्तु वरीसई का गति की तीसरी श्रेणी में अभ्यास करें।

5

सभा गान का परिचय

सभाओं में प्रस्तुत किया जाने वाला संगीत सभा गान है। विशेष श्रोतागण के समक्ष प्रस्तुति करना तथा प्रसिद्धि प्राप्त करना प्रस्तुतकर्ता पर निर्भर करता है। एक सफल प्रस्तुतकर्ता बनने के लिये उसे गायन की कठिन शिक्षा की आवश्यकता होती है। सभा गान के विषय में अध्ययन करने से पहले अभ्यास गान का अध्ययन करना आवश्यक है। सही और परिष्कृत आवाज के लिये शिक्षा स्वर अभ्यास से आरंभ होती है जैसे सरली वरीसई, जनता वरीसई, अलंकार, दत्तु स्वर, संचारी गीत, लक्षण गीत, जाति स्वर, स्वर जति और वर्ण।

यह स्वर, ताल (स्वर ज्ञानं, ताल ज्ञानं) और अन्य संगीत योग्यताओं का गहन ज्ञान विकसित करने में सहायक है। उपर्युक्त रूपों को प्राथमिक संगीत रूप भी कहते हैं। इनमें से गीतं, जाति स्वर, स्वर जति और वर्णं को कल्पित संगीत के रूपों की भांति देखा जाता है। अभ्यास गान विधा संगीत के मूल सिद्धांतों को स्पष्ट करती है जिससे कोई भी कर्नाटक संगीत के कल्पित और मनोधर्म संगीत अवस्थाओं में सरलता से जा सकता है। सभा गान में कल्पित और मनोधर्म संगीत, दोनों अवस्थायें हैं और इसमें निम्न संगीत विधायें हैं:- (1) तान वर्णं (2) कीर्तन (3) कृति (4) जावली (5) तरंगं (6) तिल्लाना

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात विद्यार्थी:

- वर्णं को पहचानकर गा पायेगा; स्वरज्ञानं को सुधार पायेगा;
- कृति से कीर्तन विधा का अंतर बता पायेगा;
- जावली के रूप में शास्त्रीय संगीत की तुलनात्मक दृष्टि से सुगम रूप को बता पायेगा;
- तरंगं के रूप में एक सरल शास्त्रीय रूप लिख पायेगा;
- तिल्लाना के रूप में लयात्मक प्रवशत्ति युक्त संगीत विधा का वर्णन कर पायेगा;
- सभा गान की प्रत्येक संगीत विधा का विस्तार पूर्वक विवरण लिख पायेगा।

टिप्पणी

5.1 वर्ण- एक संक्षिप्त परिचय

वर्ण संगीत संसार में कहीं और नहीं होकर केवल कर्नाटक संगीत में ही विद्यमान है। वर्ण राग का व्याकरणात्मक मार्गदर्शन है जो राग के व्याकरण के लिये एक कसौटी है। वर्ण का प्रसिद्ध अर्थ रंग है जो सुसंगत नहीं है। वर्ण ऐसी रचनायें हैं जो अभ्यास गान और सभा गान दोनों में मिलती हैं। वर्ण का अभ्यास सभी संगीतज्ञों जिनमें गायक और वादक सम्मिलित हैं, के लिये आवश्यक दिनचर्या है। भरत नाट्य शास्त्र में वर्ण शब्द का प्रयोग एक गान क्रिया या मधुर गीत के रूप में किया गया है। इस काल में राग के परिचय के लिये गमक के स्थान पर स्वर प्रतिरूप अपनाये जाते थे। ये विभिन्न प्रकार के स्वर प्रतिरूप अलंकार कहलाते थे। ये अलंकार चार प्रकार के वर्णों पर आधारित हैं जो इस प्रकार हैं:-

(1) स्थायी वर्ण: स रि स; रि स स

(2) आरोही वर्ण अर्थात् आरोहन क्रम में स्वर प्रतिरूप, स रि ग रि ग म ग म प

(3) अवरोही वर्ण अर्थात् अवरोहन क्रम में स्वर प्रतिरूप, सं नि नि ध ध प

(4) संचारी: इन सभी पहले के वर्णों का मिश्रण

ऊपर दिये गये स्थायी शब्द का अर्थ है स्थिर न कि मंद्र या तार स्थायी/स्थान (निम्न/उच्च सप्तक)। एक वर्ण में न केवल रागरंजक मिश्रण अपितु विशेष संचार और कई अपूर्व प्रयोग तथा दत्तु प्रयोग जो राग स्वीकृत हैं, सम्मिलित होते हैं। वर्ण में दो अंग हैं, पूर्वांग और उत्तरांग। पूर्वांग भाग तीन विभागों में विभाजित है, यथा- पल्लवी, अनुपल्लवी और मूकस्थायी स्वर। उत्तरांग भाग के दो विभाग हैं, यथा- चरण और एत्तुगद स्वर। पूर्वांग और उत्तरांग प्राय: एक ही लंबाई के होते हैं। वर्ण का चरण अन्य नामों से भी जाना जाता है, जैसे एत्तुगद पल्लवी, उप पल्लवी और चित्त पल्लवी। वर्ण दो प्रकार के हैं, यथा- तान वर्ण और पद वर्ण इनका उल्लेख नीचे दिया गया है। इसके अतिरिक्त एक अन्य प्रकार है जो दत्तु वर्ण कहलाता है।

5.1.1 तान वर्ण

तान वर्ण सभा गान के आरंभ में गाई अथवा बजाई जाने वाली रचना है। इन वर्णों का अभ्यास सामान्यतया गीत और स्वर जति के अध्ययन के पश्चात किया जाता है।

इस प्रकार के वर्ण में तान जति प्रकार के स्वर व्याक्यांश होते हैं अत: इसे तान वर्ण कहते हैं। तान वर्ण में केवल पल्लवी, अनुपल्लवी और चरण भागों में ही साहित्य होता है। अन्य भाग सोल्फा पद्यांश की भांति गाये जाते हैं। यह वर्ण सभा गान के आरंभ में गाने के लिये चुना जाता है क्योंकि यह आवाज को लंबे समय तक स्थिर रखने तथा तीनों सप्तक में वाक्यांश गाने में सहायक होता है। यह गायक को सफलतापूर्वक सभा गान में प्रस्तुति के लिये तैयार करता है।

तान वर्ण के कुछ प्रसिद्ध रचयिता हैं :

पच्चीमिरयं अदियपैया, वीना कुप्पय्यर, पल्लवी गोपाल अय्यर, मनमबुचवदि वर्णं सुब्बय्यर, स्वाति तिरुनल, मुत्तुस्वामी दीक्षितर, श्यामा शास्त्री, पटनं सुब्रमन्य अय्यर, रामनद श्रीनिवास अय्यंगर, व्यंकटराम अय्यर तान वर्णं के कुछ प्रसिद्ध रचयिता हैं।

तान वर्णं के कुछ उदाहरण उनके राग और ताल सहित नीचे दिये गये हैं:

1. वीरिबोनी- भैरवी रागं- अता ताल- पच्चीमिरयं अदियपैया
2. कनकंगी- तोड़ी रागं- अता ताल- पल्लवी गोपाल अय्यर
3. वनजाक्षी- कल्याणी रागं - आदि ताल- पल्लवी गोपाल अय्यर
4. इंतचलमु- बेगड रागं -आदि ताल- वीना कुप्पय्यर
5. एव्वरी बोधन- आभोगी रागं- आदि ताल- पटनं सुब्रमन्य अय्यर
6. निन्नु कोरी- मोहन रागं-आदि ताल- रामनद श्रीनिवास अय्यंगर
7. जलजाक्ष- हंसधवनी रागं-आदि ताल- पटनं सुब्रमन्य अ"यर

5.1.2 पद वर्णं

पद वर्णं को चौक वर्णं तथा अता वर्णं भी कहते हैं। यह वर्णं एक नृत्य का रूप है और सामान्यतया नृत्य समारोहों में सुना जाता है। संपूर्ण रचना में साहित्य होता है। इस रचना में संगीत की गति धीमी होती है तथा इसका उद्देश्य नर्तक को साहित्य भाव दर्शाने का पूर्ण अवसर प्रदान करना है। पद वर्णं में नृत्त स्वर भाग में और अभिनय साहित्य भाग में किया जाता है। पद वर्णं के कुछ प्रसिद्ध रचयिता हैं:-

गोविंदरमय्या, रामास्वामी दीक्षितर, मुत्तुस्वामी दीक्षितर, पटनं सुब्रमन्य अय्यर, स्वाति तिरुनल, रंगस्वामी नट्टुवानर, मैसूर सदाशिव राव, पोनैया पिल्लै और सुब्बराम दीक्षितर पद वर्णं के कुछ प्रसिद्ध रचयिता हैं।

पद वर्णं के कुछ उदाहरण:-

1. रूपमु जूचि- तोडी रागं- आदि ताल- मुत्तुस्वामी दीक्षितर
2. एला नान्नेनचेवु- पूर्नचंद्रिका रागं- चतुरस्र रूपक ताल- रामास्वामी दीक्षितर
3. चलमेल- नटकुरंजी रागं- आदि ताल- रंगस्वामी नट्टुवानर
4. सामिनीन्न- अटाना रागं- अता ताल- पटनं सुब्रमन्य अय्यर

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 5.1

1. आदि ताल में तान वर्ण के दो रचयिताओं के नाम बताइये।
2. वर्ण कितने प्रकार के हैं? नाम बताइये।
3. वर्ण के क्या अंग हैं?
4. उत्तरांग के विभाग क्या हैं?
5. पद वर्ण के दो प्रसिद्ध रचयिताओं के नाम बताइये।
6. पद वर्ण का दूसरा नाम क्या है?

5.2 कीर्तन

कीर्तन कृति से अधिक प्राचीन है जो अन्य संगीत विधा है। कृति शब्द उस रचना का उल्लेख करता है जिसका महत्त्व विशेषतया उसके संगीत में है न कि उसके साहित्य में। परंतु कीर्तन में साहित्य का प्रमुख महत्त्व है। वास्तव में कृति कीर्तन का एक विकसित रूप है। कीर्तन का जन्म लगभग 14वीं शताब्दी के मध्य के उपरांत हुआ है। तालपकं रचयिता (1400–1500) प्रथम थे जिन्होंने कीर्तन शब्द का प्रयोग किया और पल्लवी, अनुपल्लवी और चरण भागों सहित कीर्तन लिखे। कीर्तन का संगीत और लय दोनों सरल है। यह व्यवहारिक संगीत से संबन्धित है। यह बहुत छोटा और सरल भी होता है और विद्यार्थी द्वारा सरलता से सीखा जा सकता है। कीर्तन की मुख्य विशेषता भक्ति रस की उत्पत्ति या भक्ति की भावना है, अत: कीर्तन एक धार्मिक विधा है। इसका साहित्य और गीत भक्तिपूर्ण या पौराणिक विषय पर आधारित होते हैं। कई कीर्तन सामान्यतया ईश्वर की महानता की प्रशंसा में हैं। कीर्तन में कई शब्द होते हैं और सभी चरण उसी धातु (स्वर) में गाये जाते हैं। उदाहरण के लिये, यदुकुलकांबोजी राग में त्यागराज का श्री राम जय राम का दिव्य नाम कीर्तन और पुन्नगवराली राग में तव दसोहम इस प्रकार के उदाहरण हैं।

कुछ कीर्तनों में चरणों में पल्लवी के समान संगीत है। अनुपल्लवी कीर्तन में एक अनावश्यक अंग है। कीर्तन में कुछ चरणों का होना उसका एक विशेष लक्षण है। कीर्तन में चित्त स्वर और स्वर साहित्य जैसे सजावटी अंग नहीं मिलते हैं, परंतु कई बार मध्यमकला साहित्य कीर्तन में मिल जाता है। समुदाय कृति की भांति समुदाय कीर्तन भी होते हैं जैसे त्यागराज के दिव्य नाम कीर्तन, उत्सव संप्रदाय कीर्तन और स्वाति तिरूनल के नवराती कीर्तन।

5.2.1 दिव्य नाम कीर्तन

त्यागराज ने कई दिव्य नाम कीर्तनों (गीत जिनमें ईश्वर के नाम और उसकी प्रशंसा होती है, जो सामान्यतया भजनों में गाये जाते हैं) की रचना की है। दिव्य नाम कीर्तन दो प्रकार के होते हैं, यथा, एकधातु प्रकार और द्विधातु प्रकार।

1. एकधातु प्रकार: इस प्रकार के गायन में पल्लवी और चरण एक ही धातु अथवा स्वर में गाये जाते हैं। उदाहरण के लिये:- त्यागराज द्वारा रचित श्री राम जयराम- यदुकुलकांबोजी रागं, तव दसोहं- पुन्नगवराली रागं- आदि ताल।

2. द्विधातु प्रकार: इस प्रकार के गायन में चरण का संगीत पल्लवी से भिन्न होता है। उदाहरण के लिये: त्यागराज द्वारा रचित श्री राम जयराम- सहाना रागं, पही रामचंद्र पलित सुरेन्द्र- शंकराभरन रागं।

5.2.2 उत्सव संप्रदाय कीर्तन

त्यागराज ने उत्सव संप्रदाय कीर्तनों की भी रचना की है। प्रशंसा की धारणा कुछ प्रणालियों या उपचारों के द्वारा ईश्वर का आह्वान करना है और वह विशेष रचना जो इन उपचारों के साथ गाने के लिये प्रस्तावित हुई उसे उत्सव संप्रदाय कीर्तन कहा जाता है। इस प्रकार की 24 रचनायें हैं।

कीर्तन के कुछ प्रमुख रचयिता निम्नलिखित हैं:

पुरंदर दास, भद्रचल रामदास, तल्लपक अन्नमचार्य, त्यागराज, गोपाल ख्रष्ण भारती, अरुणाचल कविरयर, चंगलवरय शास्त्री और कविकुंजर भारती।

पाठगत प्रश्न 5.2

1. कीर्तन शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम किसने किया?
2. कीर्तन में किस प्रकार का साहित्य प्रयुक्त होता है?
3. कीर्तन का विशेष लक्षण क्या है?
4. दिव्य नाम कीर्तन की रचना किसने की?
5. दिव्य नाम कीर्तन के गाने के तरीकों का विवरण दीजिये।
6. कीर्तन के तीन भाग कौन से हैं?
7. कीर्तन के दो प्रमुख रचयिताओं के नाम बताइये।

5.3 कृति

कृति वह रचना है जिसका महत्त्व उसके साहित्य की अपेक्षा उसके संगीत में है। सभा गान में कृतियों की प्रमुख भूमिका है। यह मेजर, माइनर, वक्र और विवादी रागों में रची गयी है। इसमें पल्लवी, अनुपल्लवी और चरण होते हैं। कुछ कृतियों में अधिक चरण, समष्टी चरण, मध्यम कला

टिप्पणी

साहित्य, कई संगतियां, चित्त स्वर, स्वर साहित्य, सोलकट्टु स्वर और साथ ही होती हैं। कृतियां सभी तालों में रची जाती हैं। कृतियां तेलुगु, संस्कृत, तमिल, मलयालम इत्यादि में रचित हैं। प्रमुख रचयिता संगीत की त्रिमूर्ति, स्वाति तिरुनल, जयचमराजेंद्र वाडेयर, वीना कुपय्यर, पटनं सुब्रमन्य अय्यर, मैसोर सदाशिव राव, मुथैया भगवतर, मैसोर वासुदेवाचार्य इत्यादि हैं। कीर्तन की अपेक्षा कृति भले ही प्रकृति में धार्मिक न हो क्योंकि यह दार्शनिक विचारों या संरक्षण इत्यादि का वर्णन करती है।

पाठगत प्रश्न 5.3

1. कृति क्या है?
2. कृति के सजावट अंग क्या हैं?
3. कृति के तीन रचयिताओं के नाम बताइये।
4. राजवंशी रचयिता कौन हैं?

5.4 पदम

पदम एक विशिष्ट रचना है जो सामान्यतया संगीत और नृत्य सभाओं दोनों के लिये प्रयुक्त होती है। यह रचना संगीत में सघन और गति में धीमी है क्योंकि नृत्य सभाओं में प्रयुक्त होने के कारण यह भाव को महत्त्व देती है। इसके विभाग हैं जैसे पल्लवी, अनुपल्लवी और विविध चरण। पदम की विषय वस्तु 'मधुर भक्ति', अर्थात प्रेम से परिपूर्ण भक्ति है। परोक्ष रूप से इसका जीवात्मा-परमात्मा के संबन्धों के साथ आचरण है। प्रसिद्ध पदम रचयिता सारंगपाणी, घनं चिन्नय्या, सभापति, क्षेत्रज्ञ, घनं कृष्ण अय्यर, सुब्बराम अय्यर, स्वाति तिरुनल तथा इरयिम्मन थंपी हैं।

पाठगत प्रश्न 5.4

1. पदम की विषय वस्तु क्या है?
2. दो प्रसिद्ध पदम रचयिताओं के नाम बताइये।
3. पदम में क्या विभाग हैं?

5.5 जावली

जावली कर्नाटक संगीत के सबसे अधिक प्रसिद्ध रूपों में से एक है। यह संगीत रचना सामान्यतया संगीत सभा के पल्लवी अंश के पश्चात गायी जाती है। जावली नाम कन्नड़ शब्द जावडी से लिया

गया है जिसका अर्थ प्रेम काव्य का गीत है। सामान्यतया संगीत मध्यमकला या मध्यम गति में होता है। जावली का जन्म 19वीं शताब्दी में त्रिमूर्ति काल के बाद हुआ। जावली संगीत और नृत्य सभाओं में प्रचलित सजीव और सुगम शास्त्रीय संगीत रचनायें हैं। नायक, नायिका और सखी द्वारा गायी गई जावली रचनायें हैं। जावली की धुनें बहुत आकर्षक और लय युक्त होती हैं जो नृत्य सभाओं के लिये भलीभांति अनुकूल होती हैं। नर्तक ऐसी रचनाओं के लिये अच्छा अभिनय कर सकता है। जावली तेलुगु, कन्नड़, तमिल और मलयालम भाषाओं में उपलब्ध हैं। सामान्यतया जावली आदि, रूपक और चापु ताल में बद्ध होते हैं। जावली के तीन विभाग हैं, यथा, पल्लवी, अनुपल्लवी और चरण। चरण एक या अधिक हो सकते हैं। कुछ जावली में अनुपल्लवी नहीं होती है। उदाहरण के लिये 'आदिनीपई मरुलुकोन्नडी'– यमुनाकल्याणी रागं।

कुछ प्रसिद्ध जावली निम्नलिखित हैं:–

1. आदिनीपई मरुलुकोन्नडीर– यमुनाकल्याणी रागं– आदि तालं
2. चेलीनेनेत्लू साहिन्तुन– फराज रागं– आदि तालं
3. अपादुरुकुकलोनैतिनी– खमाज रागं– आदि तालं
4. वेगनीवु वानी रामानव– सुरति रागं– आदि तालं
5. इतुसहसमुलो न्यायम– सैंधवी रागं– आदि तालं

जावली के प्रमुख रचयिता और उनके हस्ताक्षर या मुद्रा नीचे दिये गये हैं:–

1. धर्मपुरी सुब्बरायर – (मुद्रा–धर्मपुरी)
2. पट्टभीरमय्या – (मुद्रा– तालवनेस)
3. स्वाति तिरुनल – (मुद्रा– पद्मनाभ)
4. पटनं सुब्रमन्य अय्यर– (मुद्रा– व्यंकटेश)
5. विद्याला नारायणस्वामी– (मुद्रा– तिरुपतिपुर)
6. रामनद श्रीनिवास अय्यंगर– (मुद्रा– श्रीनिवास)

पाठगत प्रश्न 5.5

1. जावली की उत्पत्ति किस शब्द से हुई है?
2. जावडी का अर्थ क्या है?
3. पट्टभीरमय्या और स्वाति तिरुनल की जावली रचनाओं में उनकी क्या मुद्रायें हैं?
4. जावली के तीन विभाग कौन से हैं?

टिप्पणी

5. सामान्यतया जावली की रचना किन भाषाओं में की जाती है?

6. जावली के तीन प्रसिद्ध रचयिताओं के नाम बताइये।

5.6 तरंगं

संगीत सभा में तरंगं को पल्लवी के बाद की रचना की भांति प्रस्तुत किया जाता है। इनका मुख्य विषय भगवान कृष्ण की प्रशंसा होती है। नृत्य में इसकी निरंतर प्रस्तुति होती है।

रचयिता नारायण तीर्थ ने कृष्ण लीला तरंगिनी के नाम से कई तरंगों की रचना की है। ये तरंगं निरंतर एक स्थिर राग में नहीं होते हैं। कुछ तरंगं पल्लवी, अनुपल्लवी और चरणं की बनावट का पूर्णत: अनुसरण नहीं करते हैं। आंध्र प्रदेश में इन तरंगों का धार्मिक समारोहों में गाने का बहुत प्रचार है जहां मुख्य गायक तरंग को प्रस्तुत करते समय कुछ नृत्य करता है। तमिल नाडु में भजनों में तरंगं अवश्य होते हैं।

कुछ प्रसिद्ध तरंगं हैं:-

माधव मामव- नीलांबरी राग- आदि ताल

गोवर्धन गिरधर- दरबारी कनड राग- आदि ताल

पुरया मम कामं- बिलहरी राग- आदि ताल

बृंदावनं- मुखारी राग- आदि ताल

पाठगत प्रश्न 5.6

1. संगीत सभा में तरंगं कब गाया जाता है?
2. तरंगं मुख्यतया किस ईश्वर पर रचित हैं?
3. कृष्ण लीला तरंगं का रचयिता कौन था?
4. दो प्रसिद्ध तरंगों के नाम बताइये।
5. सामान्यतया तरंगं को किस अवसर पर गाया जाता है?

5.7 तिल्लाना

तिल्लाना लघु, स्फूर्तिदायक और सजीव संगीत विधाओं में से एक है, जिसका उद्भव 18वीं शताब्दी में हुआ था। तिल्लाना तीन लयात्मक शब्दांशों से बना है- ति-ल-न। यह विधा अपने स्फूर्तिपूर्ण और आकर्षक संगीत के कारण प्रचलित हुई। सामान्यतया इसकी गति मध्यमकला में होती है।

इस रूप में पल्लवी, अनुपल्लवी और चरण विभाग हैं और प्रत्येक विभाग में विभिन्न धातु हैं। सामान्यतया पल्लवी और अनुपल्लवी में केवल जति होती है और चरण में जति के अतिरिक्त साहित्य और सोल्फा शब्दांश होते हैं। तिल्लाना का साहित्य संस्कृत, तेलुगु या तमिल में मिलता है। तिल्लाना आदि और रूपक ताल में रचित हैं। कुछ तिल्लाना 24 अक्षरकाल युक्त लक्ष्मीसा जैसी कठिन तालों में भी हैं। यह ताल 108 तालों में से एक है। रामनद श्रीनिवास अय्यंगर ने एक तिल्लाना लक्ष्मीसा तालं में रचा है। इस विधा को संगीत सभा में पल्लवी के बाद की रचना के रूप में गाया जाता है। इसकी स्फूर्तिपूर्ण गति और सजीव जतियां आनंददायक हैं। तिल्लाना संगीत और नृत्य समारोहों में गाया जाता है और नृत्य में इसकी निरंतर प्रस्तुति होती है। गानक्रम या प्रस्तुत करने का तरीका संगीत तथा नृत्य सभाओं में एक जैसा नहीं होता है। संगीत सभा में एक पंक्ति दो से अधिक बार नहीं दोहराई जाती है जबकि नृत्य सभाओं में यह कई बार दोहराई जा सकती है। इस प्रकार का दोहराना नर्तक के पैरों के विविध प्रकार के संचालनों में प्रत्येक पंक्ति की लयात्मक बनावट के अनुरूप प्रदर्शन करने में सहायक है। इस विधा का प्रचार मूलत: लयात्मक सोला शब्दांश त-क-त-रि-किट-नक की उपस्थिति के कारण है। तिल्लाना हिंदुस्तानी संगीत के तराना के अनुरूप है।

रागमालिका तिल्लाना, प्रचलित तिल्लाना और विद्वत्तापूर्ण तिल्लाना भी होते हैं। महा वैद्यनाथ अय्यर ने सिर्नृहनंदन ताल में विद्वत्तापूर्ण तिल्लाना की रचना की है जिसमें गौरी नायक के शब्द से आरंभ होकर कनड राग में 108 अक्षर काल हैं। पटनं सुब्रमन्य अय्यर और रामनद श्रीनिवास अय्यंगर जैसे कुछ रचयिताओं ने तिल्लाना को घन राग जैसे शंकराभरन और तोडी और इसके अतिरिक्त परंपरागत रक्ति राग सेन्जुरति, फराज, कनड और मोहनं में रचा है। आधुनिक रचयिता जैसे श्री लालगुडी जयरमन और डा. बालमुरली कृष्ण ने तिल्लाना में प्रगतिशीलता का समावेश किया है। इनके तिल्लाना में लयात्मक प्रतिरूप और तालयुक्त संगीत का मेल है। ये तिल्लाना सभी प्रकार के श्रोताओं का ध्यान आकर्षित करने योग्य हैं यहां तक कि वाद्य पर बजाये जाने पर भी।

तिल्लाना के कुछ प्रसिद्ध रचयिता:-

स्वाति तिरुनल, पोनय्या, पल्लवी शेषाय्यर, मैसोर सदाशिव राव, वीना सेषन, पटनं सुब्रमन्य अय्यर, रामनद श्रीनिवास अय्यंगर और मुतय्या भगवतर तिल्लाना के प्रसिद्ध रचयिता हैं।

कुछ प्रसिद्ध तिल्लाना:-

गीत धुन की तक धीम नदरु किट तोम- धनाश्री राग- आदि ताल- स्वाति तिरुनल

ताम ताम ताम ओदनी तोम तननं- खमाज राग- आदि ताल- पटनं सुब्रमन्य अय्यर

धीमतन तारे धीरन- बेहाग राग- आदि ताल- मुतय्या भगवतर

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 5.7

1. तिल्लाना किन शब्दांश से बना है?
2. तिल्लाना किस शताब्दी में उत्पन्न हुआ?
3. लक्ष्मीसा ताल में रचित तिल्लाना के रचयिता का नाम बताइये।
4. तिल्लाना हिंदुस्तानी संगीत की किस विधा के अनुरूप है?
5. तिल्लाना के विभागों के नाम बताइये।
6. तिल्लाना इतने प्रसिद्ध क्यों हैं?
7. तिल्लाना के दो प्रसिद्ध रचयिताओं के नाम बताइये।

आपने क्या सीखा

सभा गान कर्नाटक संगीत के प्रस्तुतिकरण के भाग में आता है जहां वर्ण, कृति, पदं, जावली, तिल्लाना, तरंगं, कीर्तन आदि संगीत विधायें प्रस्तुत की जाती हैं। इनमें से कुछ समरूप सभा नृत्यों के लिये भी प्रयुक्त होते हैं। ये हैं पदं, जावली, तिल्लाना आदि। इन संगीत विधाओं में कृति सभागान में श्रेष्ठ श्रेणी में आती है जहां कार्यक्रम का प्रमुख भाग राग स्वर आलापनं, स्वर कल्पना, निरावल आदि की भांति मनोधर्म संगीत सहित कृति द्वारा अधिकृत है। संगीत त्रिमूर्ति के काल में कृति विधा प्रशंसा प्राप्त कर चुकी थी। हल्की संगीत विधायें जैसे पदं, जावली, तिल्लाना, तरंगं, कीर्तन आदि सभा गान के अंत में आती हैं।

पाठांत अभ्यास

1. सभा गान पर एक टिप्पणी लिखिये।
2. कर्नाटक संगीत में कितने प्रकार के वर्ण हैं बताइये।
3. कीर्तन और कृति में क्या अंतर है?
4. जावली क्या है? कुछ प्रसिद्ध जावली और कुछ प्रमुख रचयिताओं के नाम लिखिये।
5. तिल्लाना पर एक अनुच्छेद लिखिये।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

5.1

1. पटनं सुब्रमन्य अय्यर और रामनद श्रीनिवास अय्यंगर
2. दो प्रकार: तान वर्ण तथा पद वर्ण
3. पूर्वांग तथा उत्तरांग
4. चरण तथा एत्तुकदई
5. मुत्तुस्वामी दीक्षितर तथा रामास्वामी दीक्षितर
6. चौक वर्ण तथा अता वर्ण

5.2

1. तालपकं रचयिता
2. भक्ति प्रकार
3. कई चरणों का होना
4. त्यागराज
5. एक धातु, द्वि धातु
6. पल्लवी, अनुपल्लवी, चरणं
7. पुरंदर दास और भद्रचल रामदास

5.3

1. कृति वह रचना है जिसका महत्त्व प्रमुख रूप से उसके संगीत में है।
2. सजावट अंग संगतियां, चित्त स्वर, स्वर साहित्य, सोलकट्टु स्वर और मुद्रायें हैं।
3. त्यागराज, स्वाति तिरुनल, मैसोर वासुदेवाचार्य
4. स्वाति तिरुनल और जयचमराजेंद्र वाडेयर

टिप्पणी

5.4

1. मधुर भक्ति जो प्रेम सहित पवित्र भक्ति है
2. क्षेत्रज्ञ, स्वाति तिरुनल
3. पल्लवी, अनुपल्लवी और चरण

5.5

1. कन्नड़ शब्द जावडी
2. प्रेम काव्य
3. धर्मपुरी और पद्मनाभ
4. पल्लवी, अनुपल्लवी और चरण
5. तेलुगु, तमिल, कन्नड़ और मलयालम
6. पटनं सुब्रमन्य अय्यर, धर्मपुरी सुब्बरायर और स्वाति तिरुनल

5.6

1. पल्लवी के बाद की रचना की भांति
2. भगवान कृष्ण
3. नारायण तीर्थ
4. गोवर्धन गिरधर, पुरया मम कामं
5. धार्मिक समारोह

5.7

1. तीन लयात्मक शब्दांशरू ति-ल-न
2. 18वीं शताब्दी
3. रामनद श्रीनिवास अय्यंगर
4. तराना
5. पल्लवी, अनुपल्लवी और चरण

6. लयात्मक सोल्फा शब्दांश त-क-त-रि-किट-नक की उपस्थिति के कारण
7. स्वाति तिरुनल और पटनं सुब्रमन्य अय्यर

निर्देशित कार्य कलाप

1. विद्यार्थियों को पांच सभा गानों को सुनना चाहिये।
2. विद्यार्थियों को 3 गतियों में अधिक अभ्यास करना चाहिये।
3. विभिन्न राग और ताल में कृति और कीर्तनों का अभ्यास करना चाहिये।
4. जावली और तिल्लाना सीखने चाहिये।

टिप्पणी

6

भारतीय वाद्यों का सामान्य वर्गीकरण

(तानपुरा बजाने की तकनीक और बनावट का विस्तृत अध्ययन)

भारतीय संगीत संसार में संगीत की सबसे प्राचीन और महत्त्वपूर्ण प्रणालियों में से एक है। यद्यपि औपचारिक रूप से हम इसके जन्म का संबन्ध वैदिक काल से मानते हैं अर्थात 4थी शताब्दी ई.पू.य परंतु कुछ प्रमाण इसकी उपस्थिति बहुत पहले से दिखाते हैं। पुरातत्त्व खुदाइयों से हमें प्राप्त भारतीयों द्वारा प्रयुक्त विभिन्न प्रकार के संगीत वाद्यों के चिह्न प्राप्त हुए हैं, जो लाखों वर्ष पहले के हैं। संपूर्ण भारत में खोजयात्रा से सैंकड़ों वाद्यों का पता चलेगा जो तंत्री, वायु और थापदार समूहों से संबन्धित हैं। प्रत्येक वाद्य भिन्न आकार, धवनि और बजाने की तकनीक युक्त हैं। लकड़ी, बांस, धातु और मिट्टी से बने वाद्य हमारे पूर्वजों की संगीत के प्रति रुचि और विभिन्न प्रकार के वाद्य बनाने और बजाने की तकनीक में कुशलता दिखाते हैं। संगीत वाद्य अमीर और गरीब, दोनों के हाथ में दिखाई देते थे। यद्यपि वीणा, तानपुरा और तबला जैसे प्रसिद्ध और मूल्यवान वाद्य राजसी महलों और बड़ी कोठियों में मिलते थे; तुंतुना, एकतार, बांसुरी और अन्य साधारण ढोल जैसे साधारण और सस्ते वाद्य गरीबों की झोंपड़ी में पाये जाते थे।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात विद्यार्थी:-

- भारतीय वाद्य संगीत की मूल विशेषतायें बता पायेगा
- संगीत वाद्यों के जन्म और विकास का विवरण दे पायेगा
- भारत के विभिन्न संगीत वाद्यों को पहचान पायेगा
- उनके वर्गीकरण के अनुसार प्रत्येक संगीत वाद्य को पहचान पायेगा

6.1 भारतीय संगीत वाद्यों की निजी विशेषता

चूंकि भारतीय संगीत महाकाव्य और पुराणों जैसे पौराणिक कथाओं और प्राचीन ग्रंथों का मिश्रण

है, इसके वाद्य देवी, देवताओं और अन्य सदाचारी दिव्य व्यक्तियों से संबन्धित हैं।

वीणा, वेणु, मृदंगं जैसे कुछ वाद्य देवी सरस्वती, भगवान कृष्ण और नंदी से संबन्धित हैं, जबकि महाति, कच्छपी और तुंबरु जैसे कुछ वाद्य उनके प्रस्तावक के प्रतिरूप हैं। संगीतज्ञ इन वाद्यों की उत्तम संगीत प्राप्त करने के लिये कई अवसर पर पूजा भी करते हैं।

भारतीय संगीत वाद्यों की कुछ प्रमुख विशेषतायें हैं। उनमें से अधिकतर इस प्रकार विकसित हुई हैं कि प्रत्येक स्वर पर सूक्ष्म सजावटी स्वर भी बजाये जा सकते हैं। यह प्रचलन चलता रह सकता था यदि भारतीय संगीत गमक को अधिक महत्त्व देना आरंभ करता। केवल इसी कारण याज और हार्प के कई प्रकार जैसे प्राचीन वाद्य प्रयुक्त नहीं होते। पियानो, हार्मोनियम और क्लेरिनेट जैसे चाबी युक्त वाद्य भारत में इसी कारण प्रसिद्ध नहीं हुए। भारतीय संगीत मेलडी पर आधारित है जिसमें संगीत स्वर एक स्वर से दूसरे स्वर की ओर विशेष स्वरों पर हल्का कंपन देते हुए बढ़ते हैं. चाबी युक्त वाद्यों में यह संभव नहीं है क्योंकि वे संगीत स्वर या स्वरों के मिश्रण को निध ॉरित अंतराल में बजा सकेंगे और सूक्ष्म गमकें और श्रुतियां जो केवल भारतीय विचारधारा में राग भाव ला सकती हैं उन्हें प्रस्तुत करने योग्य नहीं हैं।

पाठगत प्रश्न 6.1

1. देवी- देवताओं से संबन्धित कुछ वाद्यों के नाम बताइये।
2. कुछ वाद्यों के नाम बताइये जो उनके प्रस्तावकों के प्रतिरूप हैं।
3. भारतीय संगीत वाद्यों की कुछ प्रमुख विशेषतायें क्या हैं?
4. विदेशी वाद्य भारत में लोकप्रीय क्यों नहीं हुए?

6.2 संगीत वाद्य बनाने के लिये प्रयुक्त सामग्री

वाद्यों को बनाने के लिये विभिन्न प्रकार की सामग्री का उपयोग होता है जैसे: लकड़ी, पशु चर्म, धातु, मिट्टी आदि। बांस और कोमल सामग्री के होते हुए भी जैकवुड, ब्लैक वुड, रोज वुड, खदिरा लकड़ी, हिमालय चीड़, तुमुक्कु आदि पेड़ों से प्राप्त लकड़ी काम में ली जाती है। सोना, चांदी, कांस्य, तांबा और लोहा धातु साम्राज्य से तथा भेड़, बछड़े, भैंस का चर्म और घोड़े की पूंछ के बाल तथा हाथी जैसे जानवरों की हड्डीयां और दांत कुछ वाद्यों को बनाने के काम आते हैं। प्राचीन समय में यह समझा जाता था कि मृदंगं मिट्टी से बना है जैसा कि उसके नाम से प्रतीत होता है तथा मिट्टी का घड़ा जिसे घटं कहते हैं एक विशेष प्रकार की मिटी से बना होता है। मृदंगं के दांये सिरे पर एक काली लेयी जो मैंगनीज धूल, उबला हुआ चावल और इमली के रस से बनी होती है लगाई जाती हैय प्रस्तुति के समय उसके बायें सिरे पर एक सूजी और पानी की बनी लेयी लगाई जाती है और बाद में हटा दी जाती है। वीणा की सारिकाओं को स्थापित करने के लिये मोम का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार तानपुरे, वीणा और सितार के तुंबे एक

टिप्पणी

सब्जी जिसे कद्दु कहते हैं उसके गूदे को हटाकर सख्त और गुंजायमान बनाने के लिये संशोधित किया जाता है।

संगीत वाद्यों के निर्माण के लिये प्रयुक्त होने वाली लकड़ी, बांस और रीड विस्तृत उपचार प्रक्रिया से गुजरते हैं। पचास साल से पुराने पेड़ के तने को काट कर उसे सख्त बनाने के लिये वाद्य के ढांचे को आकार देने से पहले उसे सूर्य की रोशनी और मिट्टी के नीचे लंबे समय के लिये सुरक्षित किया जाता है। जब वीणा, गोटु वाद्यं और तानपुरा बनाये जाते हैं, तो भिन्न भागों जैसे तुंबा, डांड और सिरे के लिये उसी पेड़ की लकड़ी प्राप्त करने के लिये विशेष ध्यान रखना पड़ता है जिससे धवनि और गूंज की गुणवत्ता बनी रहे। वाद्य- निर्माण एक बहुत बारीक और जटिल कला है अत: शिल्पकार को प्रयुक्त सामग्री की गुणवत्ता और धवनि के सिद्धांतों का गहरा ज्ञान होना आवश्यक है। वाद्य बनाने के लिये प्रसिद्ध स्थान तंजौर, तिरुवनंतपुरम, मनमदुरई, चेन्नई तथा बेंगलुरु हैं।

पाठगत प्रश्न 6.2

1. संगीत वाद्य बनाने के लिये कौन से पेड़ों से लकड़ी प्राप्त होती है?
2. मृदंगं के दायें सिरे पर कौन सी लेयी लगाई जाती है?
3. वीणा की सारिकाओं को स्थापित करने के लिये क्या वस्तु प्रयुक्त होती है?
4. संगीत वाद्य बनाने के लिये कौन से स्थान प्रसिद्ध हैं?

6.3 विदेशी वाद्य

भारतीय जो अपनी सहनशीलता, आतिथ्य के लिये प्रसिद्ध हैं, कई धर्मों, धर्म प्रचारकों और व्यापारियों, जो शासक बन गये, को लंबे समय से अपनाते आये हैं और उनके साथ कई भाषायें और संस्कृति को भी अपनाया है। उसी प्रकार वायलिन, मेंडोलिन, सेक्सोफोन, गिटार, क्लेरिनेट और हार्मोनियम को अपने संगीत का भाग बना कर अपना लिया। इस संदर्भ में बालुस्वामी दीक्षितर और वेदीवेलु के प्रयत्न सराहनीय हैं। वायलिन के अतिरिक्त अन्य वाद्यों ने भारतीय संगीत के क्षेत्र में केवल 20वीं शताब्दी के मध्य से प्रवेश किया। ऐसा विश्वास है कि इनमें से कुछ वाद्य भारत में पहले से ही थे। तथापि यह स्पष्ट है कि विदेश से ताल वाद्य नहीं अपनाये गये। हमने इन वाद्यों में कुछ सूक्ष्म परिवर्तन किये जिससे इन पर हमारे संगीत के साथ सरलता और पूर्णता से अभ्यास किया जा सके। जबकि हमने वायलिन के तार और बनाने की तकनीक में परिवर्तन किया है, बहुत प्राचीन भारतीय वाद्य गोटुवाद्यं की भांति गिटार एक वस्तु - कोण सहित बजाई जाती है।

पाठगत प्रश्न 6.3

1. हमारे संगीत में कौन से विदेशी वाद्य अपनाये गये हैं?
2. भारतीय संगीत में वायलिन के परिचय के लिये कौन उत्तरदायी है?
3. भारतीय संगीत में वायलिन के अतिरिक्त वाद्य कब प्रचलित हुए?

6.4 वर्गीकरण

सामान्यतया बहुत प्राचीन समय से संगीत वाद्यों का वर्गीकरण चार प्रकारों में हुआ था, यथा ''ततं, अवनधं, सुषिरं तथा घनं''। भरत, मतंग, नारद, शारंगदेव और अन्य संगीत विद्वानों ने इस वर्गीकरण का अपनी उदाहरण सहित ख्रतियों में समर्थन किया है।

'ततं चौव अवनधं च घनं सुषिरं एव च चतुर्विधं तु विज्ञेयमातोद्यं लक्षणान्वितं'

6.4.1 तत वाद्य या तंत्री वाद्य (कोर्डोफोन)

तत वाद्य या तंत्री वाद्य वे हैं जिनमें तारों में कंपन पैदा करके धवनि उत्पन्न की जाती है। तंत्री वाद्यों के प्रकारों में कई तरह से संगीत बजाया जा सकता है। इनमें कंपन उत्पन्न करने के तरीके के अनुसार कई प्रकार हो सकते हैं:

1. खींचने वाले वाद्य वे हैं जिनमें कोण या अंगुलियों से कंपन पैदा करके धवनि उत्पन्न की जाती है। इस प्रकार के उदाहरण वीणा, गोट्टूवाद्यं, सितार, सरोद, गिटार, तंबुरा, एकतार और दोतार हैं। ये नखज भी कहलाते हैं।
2. गज प्रकार वे हैं जिनमें ध्वनि या कंपन गज द्वारा उत्पन्न होते हैं। उदाहरण वायलिन, सारंगी और दिलरुबा हैं। इन्हें धनुर्ज भी कहते हैं।
3. खींचने और गज प्रकारों का वर्गीकरण उनमें भी किया जा सकता है जिनमें साधारण अंगुलियों का बोर्ड हो। यहां स्वर स्थान बताने के लिये सारिकायें नहीं होती हैं। उदाहरण के लिये वायलिन, गोट्टुवाद्यं आदि। दूसरा प्रकार सारिकाओं सहित है जो वीणा, सितार आदि में होता है।
4. तंत्री वाद्य तानपुरा, तुंतुना, एक तार और दो तार की भांति भी हो सकते हैं जहां स्वर खुले तारों पर बजाये जाते हैं। यहां तार की संपूर्ण लंबाई कंपन करती है और बांये हाथ की अंगुलियों का प्रयोग नहीं किया जाता है। ये वाद्य सामान्यतया श्रुति संगत देने में प्रयोग किये जाते हैं।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 6.4

1. संगीत वाद्य कितने भागों में विभाजित हैं और वे कौन से हैं?
2. तत वाद्य अथवा तंत्री वाद्य क्या है?
3. तंत्री वाद्य किस प्रकार विभाजित हैं?
4. सब प्रकार के तंत्रीवाद्यों का एक उदाहरण दीजिये।

6.4.2 फूंक से बजने वाले वाद्य अथवा सुषिर वाद्य (एयरोफोन)

सुषिर वाद्य अथवा फूंक से बजने वाले वाद्य वे हैं जिनमें नली के अंदर हवा के कालम के कंपन द्वारा ध्वनि उत्पन्न होती है। नली में हवा के झोंके के प्रवाह द्वारा हवा के कालम में कंपन उत्पन्न होता है।

सुषिर वाद्य दो प्रकार के हैं:

1. वे जहां वादक की श्वास द्वारा हवा पहुंचाई जाती है, जैसे बांसुरी, नागस्वरं, कोंबु, एक्कलं, शंख, मगुदी और अन्य।
2. वे जिनमें हवा सामान्यतया कुछ यांत्रिक साधनों द्वारा पहुंचाई या छोड़ी जाती है, जैसे हार्मोनियम और पियानो में।

पहला फिर उनमें विभाजित होता है जिनमें श्वास को मुख और नाक द्वारा छोड़ा जाता है। प्राचीन समय में संगीत वाद्य बहुत दिव्य समझे जाते थे और वाद्य का मुख से स्पर्श प्रदूषित समझा जाता था।

मुख से बजाने वाले पुन: दो प्रकार के हैं:-

1. जिनमें हवा वाद्य की दीवार पर बने सुराख द्वारा छोड़ी जाती है जैसा कि बांसुरी में होता है
2. वे जिनमें हवा कंपनशील रीड या मुख भाग द्वारा छोड़ी जाती है जैसे नागस्वरं, शेहनाई, मुख वीणा, क्लेरिनेट और ओबो में होता है

कुछ सुषिर वाद्यों में श्रुति वाद्य के साथ स्थित होती है, उदाहरण- मगुदी जिसमें दो नलियां होती हैं य एक श्रुति उत्पन्न करने के लिये और दूसरी संगीत के लिये। ये नलियां श्रुति नादि और स्वर नादि कहलाती हैं। इन्हें मिश्रित सुषिर वाद्य कहते हैं। नदुनकुजल भी इस समूह के अंतर्गत आता है।

पाठगत प्रश्न 6.5

1. सुषिर वाद्य क्या हैं?
2. सुषिर वाद्यों का वर्गीकरण किस प्रकार किया गया है?
3. नाक से बजने वाले वाद्यों का प्रचलन कैसे हुआ?
4. मगुदी वाद्य में दो नलियां कौन सी हैं?

6.4.3 ताल वाद्य या अवनद्ध वाद्य (मेंब्रनोफोन)

अवनद्ध वाद्य या ताल वाद्य वे हैं जिनमें धवनि खींचे हुए चर्म के कंपन से या दो ठोस धातु या लकड़ी के खंडों को मिलाकर बजाने से उत्पन्न होती है। ताल वाद्य सामान्यतया संगीत की गति को नियंत्रित करने के लिये प्रयुक्त होते हैं।

बजाने के तरीके के आधार पर ताल वाद्यों का वर्गीकरण इस प्रकार हैरू

1. वे जो दो हाथों से बजाये जाते हैं, उदाहरण: मृदंगं।
2. वे जिनके सिरे दो डंडियों से बजाते हैं, उदाहरण: डमरं, नगारा।
3. वे जिनका एक सिरा हाथ से तथा दूसरा डंडी से बजाया जाता है, उदाहरण: थाविल।
4. वे जिनमें वाद्य के केवल एक ओर हाथ या डंडी से बजाया जाता है, जैसे खंजीरा, इडैक्का और चेंटा।

पाठगत प्रश्न 6.6

1. अवनद्ध वाद्य या ताल वाद्य क्या हैं?
2. ताल वाद्यों का वर्गीकरण किस प्रकार होता है?
3. उन वाद्यों के नाम बताइये जो केवल एक ओर बजाये जाते हैं।
4. उन वाद्यों के नाम बताइये जो दोनों हाथों से बजाये जाते हैं।

6.4.4 घन वाद्य (इडियोफोन)

धातु या पत्थर के बने कई करताल वाद्य लय रखने के लिये प्रयुक्त होते हैं। उदाहरण : जलरा, तालं, ब्रह्मताल, नट्टुवा तालं, इल्लत्तालं तथा अन्य। जलरा भजन और कलाक्षेपं में प्रयुक्त होता

टिप्पणी

है। ब्रह्मतालं, जो आकार में बड़ा होता है, मंदिर के धार्मिक कर्मों में प्रयुक्त होता है। नट्टुवा तालं नृत्य शिक्षकों द्वारा प्रयुक्त होता है तथा इल्लत्तालं कथकली नृत्य का भाग है। सेमक्कालं की भांति घंटे मंदिर या शव यात्रा के समय प्रयुक्त होते हैं। चीपला या कस्टानेट कथकलाक्षेपं से संबन्धित हैं। मिट्टी के घड़े भी जो कई धातुओं से मिली हुई मिटी से बनाये जाते हैं लय रखने के लिये प्रयुक्त होते हैं। यह विशेष वाद्य घटं कहलाता है। संगीतज्ञ इस वाद्य को अपनी गोद में रख कर दोनों हाथों से बजाते हैं। ये सब घन वाद्य हैं तथा ताल वाद्य समूह से संबन्धित हैं।

पाठगत प्रश्न 6.7

1. घन वाद्य क्या है?
2. विभिन्न अवसरों पर प्रयुक्त होने वाले घन वाद्यों के उदाहरण दीजिये।
3. चीपला या कस्टानेट किस प्रकार के कला रूप से संबन्धित हैं?
4. सेमक्कालं की भांति घंटे किन अवसरों पर प्रयुक्त होते हैं?

6.5 श्रुति वाद्य- ड्रोन वाद्य

श्रुति वाद्य वे संगीत वाद्य हैं जो किसी भी प्रस्तुति के लिये श्रुति संगत प्रदान करते हैं- गायन, नृत्य या वाद्य संगीत सभा गान। श्रुति वाद्य गाने या बजाने वाले को मुख्य स्वर या आधार षड्ज देते हैं। यह सभा गान का एक आवश्यक भाग है। श्रुति वाद्य प्रस्तुति को स्थिरता और संपन्नता प्रदान करते हैं और संगीतात्मक वातावरण उत्पन्न करने में प्रमुख सहायक होते हैं। कहा जाता है कि महावैद्यनाथ अय्यर जैसे महान संगीतज्ञ को अपने तंबुरा वादक को मंच पर प्रस्तुति के वास्तविक समय से ड्डक मिनट पहले ही वाद्य बजाना आरंभ करवा देने की आदत थी, जिससे श्रोतागण संगीत को सुनने से पहले उसके समस्वर हो जाते थे। सभागृह के श्रुति से भरपूर हो जाने से कलाकार रूप में आने के लिये बिना अधिक समय लिये अपनी प्रस्तुति दे सकता है।

श्रुति वाद्य गायक की आवाज के सर्वाधिक अनुकूल ऊंचाई के साथ मिलाये जाते हैं। वह उस श्रुति का चयन करने के लिये स्वतंत्र है जो उसे बिना किसी प्रयत्न के तीन स्थाइयों में गाने योग्य बनायेगी। एक वादक एकल प्रस्तुति करते हुए अपने वाद्य को उस ऊंचाई तक मिलाने के लिये स्वतंत्र होता है जिसमें वह सरलता से बजा सकेगा। वायलिन वादक या मृदंग वादक जैसे संगतकार को अपने वाद्य को प्रमुख कलाकार की स्वर की ऊंचाई तक मिलाना होता है। पाश्चात्य संगीत में ऐसा नहीं है, वहां संगीत एक विशेष ऊंचाई या की के लिये होता है और सभी प्रस्तुतकर्ताओं को इस ऊंचाई के अनुसार चलना होता है।

भारतीय सभा गान में श्रुति वाद्य प्रस्तुति के आरंभ से अंत तक बजते रहते हैं। श्रुति वाद्य का निरंतर बजना नीरसता की भावना उत्पन्न नहीं करता है बल्कि यह संगीत को संपन्न बनाता है और संपूर्ण प्रस्तुति को स्थिरता प्रदान करता है। कुछ वाद्यों में वाद्यों की ऊंचाई समायोज्य नहीं

होती हैं, जैसे बांसुरी। श्रुति वाद्य के अभाव में जब भी एक नया गीत या राग आरंभ होते हैं तो ऊंचाई कुछ सीमा तक ऊपर या नीचे जा सकती है क्योंकि यहां कोई मानक नहीं है। अत: यह अति आवश्यक है कि श्रुति वाद्य सभी प्रकार की संगीत प्रस्तुतियों में प्रयुक्त हो।

पाठगत प्रश्न 6.8

1. श्रुति वाद्य क्या है?
2. सभा गान की पूरी अवधि में भारतीय संगीतज्ञों को श्रुति वाद्यों की संगत की आवश्यकता क्यों है?
3. भारतीय संगीत सभा गानों में श्रुति वाद्यों का क्या उपयोग है?
4. पाश्चात्य संगीत के लिये एक विशेष श्रुति वाद्य की आवश्यकता क्यों नहीं है?

6.5 तंबुरा

भारतीय संगीत में तंबुराधतानपुरा एक शास्त्रीय श्रुति वाद्य है। इस वाद्य की निरंतर संगत के बिना कोई संगीत कार्यक्रम पूर्ण नहीं हो सकेगा। दक्षिण भारतीय तंबुरा पूर्णतया लकड़ी का बना होता हैय जबकि उत्तर भारतीय तंबुरे का तुंबा कद्दु का बना होता है और यह वाद्य हाथी दांत या अन्य बहुमूल्य वस्तुओं से सजाया जा सकता है। लकड़ी के एक टुकड़े का बना तंबुरा उत्तम धवनि देता है, परंतु ऐसी लकड़ी नहीं मिलने के कारण भिन्न भाग उसी लकड़ी से बनाकर जोड़ दिये जाते हैं। तंबुरा के विभिन्न भाग इस प्रकार हैं:

1. कदम अथवा तुंबी, ब्रिज, नागपासं, मनके (ट्यूनिंग बीड) तथा जीवाली अथवा जवारी
2. डांड और ग्रीवा
3. मिलाने की खूंटियां और तार

1. **कदम अथवा तुंबी**- यह वाद्य का संवेदनशील भाग है। वाद्य का यह भाग लकड़ी के बड़े टुकड़े से बनाया जाता है और खोद के उसी की पतली चादर से ढका जाता है। यह भाग तारों के खींचे जाने पर उत्पन्न धवनि को गुंजायमान बनाता है क्योंकि यह खोखला है। चार तार नागपासं से बंधे होते हैं जो इसकी तुंबी के नीचे स्थित है और इसके ऊपर स्थित ब्रिज के ऊपर से होते हुए जाते हैं। कुछ पतले धागे इन तारों को ब्रिज के धातु भाग को बिना स्पर्श किये कम्पन देने के लिये प्रयुक्त होते हैं, जिससे वाद्य में अच्छी गूंज उत्पन्न होती है। इसे उत्तर में जीवाली अथवा जवारी कहते हैं।
2. डांड और ग्रीवा- लकड़ी के बाहर निकले हुए भाग द्वारा डांड तुंबी से अलग होती है। यह लंबा भाग भी खोखला बनाया जाता है और उसी लकड़ी की पतली चादर से ढका जाता है।

टिप्पणी

3. ग्रीवा पिछला भाग है जिसमें चार मिलाने की खूंटियां सुराखों में लगी होती हैं। इन खूंटियों में चार तार बांधे जाते हैं जिन्हें खूंटियों को कसकर और ढीला करके अनुकूल बनाया जा सकता है। इन तारों का दूसरा हिस्सा नागपासं से बांधा जाता है। सामान्यतया तारों को मध्य पंचमं, दो तार षड्जं-सारनी, अनुसारनी और अंत में मंद्र षड्जं के क्रम में मिलाया जाता है।

पाठगत प्रश्न 6.9

1. तानपुरे के भिन्न भाग कौन से हैं?
2. तानपुरे में 'कदम' क्या है?
3. तानपुरे का सबसे लंबा भाग क्या कहलाता है?
4. एक तानपुरे में नागपासं क्या है?
5. एक सामान्य तानपुरे में कितने तार होते हैं?

आपने क्या सीखा

संगीत वाद्यों में भारत एक संपन्न देश है। ऐतिहासिक काल से पहले कई प्रकार के संगीत वाद्य जीवन के विभिन्न अवसरों पर प्रयुक्त होते थे। आरंभिक काल से संगीत वाद्य वाद्यों की प्रकृति और बजाने के तरीके के अनुसार तत, अवनद्ध, सुषिर और घन, इन चार प्रकारों में विभाजित हैं। भारतीय संगीत ने कई विदेशी वाद्यों को अपने अनुसार ढाला है और अपनी प्रणाली में सम्मिलित किया है, जैसे वायलिन, हारमोनियम, मेंडोलिन इत्यादि।

भारतीय संगीत संसार में सबसे प्राचीन संगीत प्रणालियों में से एक है, जो वैदिक काल में उत्पन्न हुआ है ऐसा विश्वास है; यह कई प्रकार से बहुत संपन्न है जैसे राग, ताल, रचनायें और वाद्यों में भी। विकास के क्रम में इसके कुछ सिद्धांत स्थापित हुए जो इसे अन्य संगीत प्रणालियों से विशिष्ट बनाता है। इसकी रचनाओं का साहित्य प्रकृति में शांत और पवित्र है और संगीत के लिये गमक- कुछ सूक्ष्म सजावटी तत्त्व प्रयुक्त हुए हैं, जिससे हार्मोनियम, पियानो, अकोर्डियन आदि जैसे कुछ वाद्य संगीत दृश्य से लुप्त होने के लिये बाध्य हुए।

जैसे ही मानव ने प्रकृति, जानवरों या पक्षियों का अनुकरण करने वाले वाद्यों का प्रयोग आरंभ किया, उसने वाद्य बनाने के लिये बांस, लकड़ी के विशेष प्रकार के लठ्ठे, कुछ जानवरों का चर्म और खनिज पदार्थ जैसे प्राकृतिक पदार्थ प्राप्त किये। कुछ जानवरों के दांत और सींग भी बहुत से वाद्यों के भाग बनाने में प्रयुक्त होते हैं। भारतीय संगीत के विविध वाद्य जैसे वीणा, मृदंग, बांसुरी, करताल वाद्य इत्यादि को चार प्रकारों में विभाजित किया जाता है, यथा (तत, अवनद्ध, घन तथा सुषिर। प्रत्येक वाद्य का पुराण के किसी दिव्य चरित्र के साथ कुछ संबन्ध होने से ये वाद्य भारतीय पौराणिक कथाओं का आवश्यक भाग हो गये। हमारे पूर्वजों ने विभिन्न

सभ्यताओं के विदेशी वाद्य अपनाये हैं। तंत्री और सुषिर वाद्यों के प्रकार मेलडी संगीत उत्पन्न करते हैं- अवनद्ध और घन वाद्य पूर्व वर्णित वाद्यों और गायन की लययुक्त संगति के लिये बजाये जाते हैं।

'तानपुरा' भारतीय संगीत की अन्य विशेषता है जो दूसरे वाद्यों और गायन के लिये आधार स्वर प्रदान करता है। भारतीय संगीत में दूसरे प्रकार के संगीत की तुलना में सभा गान के मध्य आंदोलन संख्या परिवर्तित नहीं होती है। तानपुरा संगीत सभा गान की पूर्ण अवधि में गूंज प्रदान करने के उद्देश्य को पूरा करता है।

पाठांत प्रश्न

1. संगीत वाद्यों का उदाहरण सहित विस्तारपूर्वक वर्गीकरण कीजिये।
2. तानपुरा बजाने की तकनीक और बनावट का संक्षेप में वर्णन कीजिये।
3. वाद्यों के अवनद्ध प्रकार बनाने के लिये प्रयुक्त सामग्री बताइये।
4. तंत्री वाद्यों के विभिन्न प्रकारों के विषय में लिखिये।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

6.1

1. वीणा, वेणु, मृदंगं कुछ वाद्य हैं जो दवताओं से संबन्धित हैं।
2. महती, कच्छपि, तुंबुरु कुछ वाद्य हैं जो अपने प्रस्तावक का प्रतिरूप हैं।
3. भारतीय संगीत वाद्य कुछ इस प्रकार विकसित हैं कि वे प्रत्येक स्वर पर कुछ अलंकार एक के बाद एक मधुर ढंग से बजा सकते हैं।
4. क्योंकि विदेशी वाद्य गमक अथवा सूक्ष्म अलंकार नहीं बजा सकते हैं।

6.2

1. संगीत वाद्य बनाने के लिये जैकवुड, ब्लैक वुड, रोज वुड, खदिरा लकड़ी, हिमालय चीड़, तुमुक्कु आदि पेड़ों से प्राप्त लकड़ी काम में ली जाती है।
2. मृदंगं के दांये सिरे पर एक लेयी जो मैंगनीज धूल, उबला हुआ चावल और इमली के रस से बनी होती है लगाई जाती है।
3. वीणा की सारिकाओं को स्थापित करने के लिये मोम का प्रयोग किया जाता है।
4. संगीत वाद्य बनाने के लिये तंजौर, तिरुवनंतपुरम, मनमदुरई, चेन्नई तथा बेंगलुरु प्रसिद्ध स्थान हैं।

टिप्पणी

6.3

1. वायलिन, मेंडोलिन, सेक्सोफोन, गिटार, क्लेरिनेट और हार्मोनियम विदेशी वाद्य हैं जो हमने अपनाये हैं।
2. बालुस्वामी दीक्षितर और वेदीवेलु ने भारतीय संगीत में वायलिन अपनाया है।
3. केवल छ्ठवीं शताब्दी के मध्य में दूसरे वाद्य प्रसिद्ध हुए।

6.4

1. भारतीय संगीत वाद्य तत, अवनद्ध, सुषिर और घन, इन चार प्रकारों में विभाजित हैं।
2. तत वाद्य या तंत्री वाद्य वे हैं जिनमें तारों में कंपन पैदा करके धवनि उत्पन्न की जाती है।
3. तंत्री वाद्य खींचने वाले वाद्य, गज, साधारण अंगुलियों का बोर्ड, सारिकाओं सहित आदि में विभाजित हैं।
4. सितार, वीणा पहला प्रकार, वायलिन, सारंगी दूसरा प्रकार, सरोद, तानपुरा तीसरा प्रकार और गिटार चौथा प्रकार।

6.5

1. सुषिर वाद्य अथवा नूंक से बजने वाले वाद्य वे हैं जिनमें हवा के कालम के कंपन द्वारा धवनि उत्पन्न होती है।
2. दोय वे वाद्य जिनमें मूंह से हवा भरी जाती है, जैसे बांसुरी और वे जिनमें हवा यांत्रिक साधनों से भरी जाती है जैसे हार्मोनियम।
3. नाक द्वारा फूंके वाद्य इस विश्वास के कारण प्रयुक्त हुए क्योंकि होठों का स्पर्श प्रदूषित समझा जाता था।
4. दो नलियां श्रुति नादि और स्वर नादि हैं।

6.6

1. अवनद्ध वाद्य या ताल वाद्य वे हैं जिनमें ध्वनि खींचे हुए चर्म के कंपन से उत्पन्न होती है।
2. इनके बजाने के तरीके के आधार पर ताल वाद्य चार प्रकारों में विभाजित हैं: वे जो केवल एक ओर से बजाये जाते हैं, वे जो दोनों ओर से बजाये जाते हैं, वे जिनका एक सिरा हाथ से तथा दूसरा डंडी से बजाया जाता है और वे जिनके सिरे दो डंडियों से बजाते हैं।
3. खंजीरा, इडैक्का और चेंटा।
4. मृदंगं, घटं इत्यादि।

6.7

1. घन वाद्य धातु या पत्थर के बने लयात्मक वाद्य हैं।
2. जलरा, ब्रह्मताल, इल्लत्तालं, नट्टुवा तालं, इल्लत्तालं आदि।
3. चीपला या कस्टानेट कथकलाक्षेपं से संबन्धित हैं।
4. सेमक्कालं की भांति घंटे मंदिर या शव यात्रा के समय प्रयुक्त होते हैं।

6.8

1. श्रुति वाद्य वे संगीत वाद्य हैं जो भारत में सभी प्रकार के संगीत सभा गानों में श्रुति संगत के लिये प्रयुक्त होते हैं।
2. श्रुति वाद्य संगीत प्रस्तुति को स्थिरता और संपन्नता प्रदान करते हैं और संगीतज्ञ को मूल ऊंचाई से न हटने में सहायक होते हैं।
3. श्रुति वाद्य सभा गान के मध्य संगीतज्ञ को की टोन या आधार श्रुति देते हैं।
4. पाश्चात्य संगीत सभा गानों में प्रत्येक रचना एक विशेष ऊंचाई में स्थित होती है जिसे सभी संगीतज्ञों को ग्रहण करना होता है।

6.9

1. कदम, नागपासं, ब्रिज, मनके (टडूनिंग बीड), जीवाली अथवा जवारी, डांड, ग्रीवा, मिलाने की खूंटियां और तार तानपुरे के भिन्न भाग हैं।
2. कदम तानपुरे में गोल आकार का खोखला भाग है जो वाद्य में गूंज प्रदान करता है।
3. तानपुरे का सबसे लंबा भाग डांडधडंडी कहलाता है।
4. नागपासं एक छोटा भाग है जहां से तानपुरे में तार आरंभ होते हैं।
5. सामान्य तानपुरे में चार तार होते हैं।

निर्देशित कार्य कलाप

1. भारत के संगीत वाद्यों के अधिकतम चित्र एकत्र करके उन्हें वर्गीकरण के अनुसार अलग कीजिये।
2. संगीतज्ञों के नामों के उन वाद्यों के साथ जिसमें वे पारंगत हैं, तीन चार्ट बनाइये।
3. संग्रहालय जाकर लोक संगीत से संबन्धित प्राचीन संगीत वाद्यों के चित्र एकत्र कीजिये।

7

कर्नाटक संगीत की स्वर लिपि पद्धति

स्वर लिपि का अर्थ है संगीत का दृश्य स्वरूप। यह सांगतिक सौच को अक्षरों को अक्षरों और चिन्हों जैसे लिखित संकेतों के माध्यम से समझाने की कला है। संगीत लिपि शास्त्र संगीत लिपि या स्वर लिपि है। पहले संगीत मौखिक पद्धति से सिखाया जाता था क्योंकि स्वर लिपि की आवश्यकता नहीं पड़ती थी और उसका प्रयोग करना भी वर्जित था। स्वर लिपि संगीत का दृश्य रूप में अनुवाद है। कागज पर संगीत का अंकन किये जाने पर संगीत के विद्यार्थी उसकी भली प्रकार व्याख्या कर सकते हैं।

यद्यपि सीखने की सर्वोत्तम विधि किसी प्रख्यात एवं प्रशिक्षित शिक्षक के द्वारा होती है, भारत में कुछ विद्यार्थी संगीत की परीक्षायें निजी प्रत्याशी के रूप में देते हैं। इस प्रकार के छात्रों के लिये संगीत पुस्तकों के माध्यम से सीखना आवश्यक है। यद्यपि कुछ संगीतज्ञ आज भी विद्यार्थियों का स्वर लिपि प्रयोग करना पसंद नहीं करते हैं, फिर भी उनके लिये यह बहुत उपयोग सिद्ध होती है। आज हम कई छपी हुई पुस्तकें उपलब्ध हैं, जिनमें गीत, स्वरजति, वर्ण, कृति इत्यादि स्वर लिपि सहित प्रकाशित हैं।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात शिक्षार्थी:

- स्वर लिपि के मूल तत्त्व सीख पायेगा;
- कई वर्ष पूर्व सीखी गई तथा स्वर लिपि में मुद्रित किसी रचना को अपने दिमाग में याद कर पायेगा तथा गा पायेगा;
- कागज पर लिखि गई रचना का अभ्यास कर पायेगा;
- एक सरल करना को लिपिबद्ध कर पायेगा;
- स्वर लिपि पद्धति का संक्षिप्त इतिहास तथा आंकलन कर पायेगा।

टिप्पणी

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

प्राचीन और मध्यकालीन संगीत ग्रंथों में स्वर लिपि पर कोई अध्याय नहीं था। संगीत लिपि शास्त्र सार्वभौमिक रुचि का विषय है। रचनायें स्वर लिपि में कागज या कुजुन के पत्तों पर लेखबद्ध नहीं थीं। मध्य कालीन प्रबंधों के लिये केवल सोल्फा स्वर लिपि की रूपरेखा दी गयी थी तथा समय की अवधि बताने के लिये कोई संकेत नहीं दिया गया था। स्थायी लक्षण वहां नहीं थे। कुडुमियामलई संगीत शिलालेख की शताब्दी में हम स्वर लिपि के अपरिष्कृत रूप को पहचान सकते हैं। परंतु एक लंबे समय के बाद हम वहां से स्वरों का पता लगा सकते हैं। 19वीं शताब्दी के अंत में हम स्वर लिपि सहित संगीत को लिख सकते थे। सुब्बराम दीक्षितर के ग्रंथ 'संगीत संप्रदाय प्रदर्शिनी' से हम स्वर लिपि को पहचान सकते हैं। 20वीं शताब्दी में तच्चूर भाइयों ने स्वर लिपि के सही रूप का आविष्कार किया और संगीत त्रिमूर्ति की स्वर लिपि सहित रचनाओं पर कई पुस्तकें लिखीं।

पाठगत प्रश्न 7.1

1. स्वर लिपि का अर्थ क्या है?
2. स्वर लिपि का लाभ क्या है?
3. स्वर लिपि का अपरिष्कृत रूप हमें कहां प्राप्त होता है?

7.2 स्वर लिपि का वगीकरण

स्वर लिपि अथवा संगीत लिपि शास्त्र की दो मुख्य पद्धतियां हैं। एक पाश्चात्य संगीत में प्रयोग की जाने वाली स्टाफ नोटशन और दूसरी भारतीय संगीत में प्रयुक्त सरगम स्वर लिपि।

7.2.1 स्टाफ स्वर लिपि

पाश्चात्य संगीत पद्धति में संगीत पांच पंक्तियों में लिखा जाता है। स्वर पंक्ति पर या रिक्त स्थान के बीच में लिखे जाते हैं। उदाहरणतया:-

टिप्पणी

7.2.2 सरगम स्वर लिपि

भारतीय शास्त्रीय संगीत पद्धति में स रि ग म प ध नि जैसे संगीत सोल्फा शब्दांश सीधी पंक्ति में लिखे जाते हैं और रचनाओं की कविता या साहित्य सोल्फा संकेत के भीतर लिखे जाते हैं।

उदाहरणतया

सं सं सं नि ध नि सं नि ध प ध प म प

कमलजड़लवीमाला सुनयना

स्वर लिपि लिखते समय हम निम्न संकेतों का प्रयोग करते हैं:-

1. समय का माप या ताल
2. अंतराल
3. स्थायी

पाठगत प्रश्न 7.2

1. कितने प्रकार की स्वर लिपियां प्रचलन में हैं?
2. स्टाफ स्वर लिपि क्या है?
3. सोल्फा स्वर लिपि क्या है?
4. स्वर लिपि में क्या महत्त्वपूर्ण तत्त्व प्रयुक्त होते हैं?

7.3 संगीत स्वरों के प्रकार

रचना के सबसे ऊपर राग का नाम बताते हैं, तत्पश्चात राग का मेल लिखते हैं और संबन्धित स्वर के प्रकार बताते हैं। सुविधा के लिये संख्या 1, 2, 3 शुद्ध और तीव्र स्वरों को बताने के लिये प्रयुक्त होती है। कर्नाटक संगीत में स्वरों के 16 प्रकार हैं। 16 में 4 के दो नाम हैं। वे इस प्रकार हैं:

क्रम सं	नाम	चिह्न
1.	षड्ज	स
2.	शुद्ध ऋषभ	$रि_1$
3.	चतुश्रुति ऋषभ	$रि_2$

	शुद्ध गंधार	$ग_1$
4.	षटश्रुति ऋषभ	$रि_3$
	साधारण गंधार	$ग_2$
5.	अंतर गंधार	$ग_3$
6.	शुद्ध मध्यम	$म_1$
7.	प्रति मध्यम	$म_2$
8.	पंचम	प
9.	शुद्ध धैवत	$ध_1$
10.	चतुश्रुति धैवत	$ध_2$
11.	षटश्रुति धैवत	$ध_3$
	कैशिकी निषाद	$नि_2$
12.	काकली निषाद	$नि_3$

किसी राग के स्वर यदि लिखने हों तो उसका उदाहरण है: कल्याणी राग का मेल स $रि_2$ $ग_3$ $म_2$ प $ध_2$ $नि_3$ सं।

स्वर के नाम में स्वर वर्ण परिवर्तन की सहायता से भी स्वरों के प्रकारों का प्रतिनिधित्व किया जाता है। उदाहरण के लियेरू ऋषभ के 3 प्रकार र रि रु या जैसे ग, गि, गु, म, मि, मु इत्यादि। सदियों पहले भारत में स्वर के नाम में स्वर वर्ण परिवर्तन की सहायता से स्वरों के प्रकारों का प्रतिनिधित्व करने का यह उपकरण आरंभ हुआ था। कुडुमियामलई शिलालेख (7वीं शताब्दी) में हमें यह मिलता है।

पाठगत प्रश्न 7.3

1. कर्नाटक संगीत में स्वरों के कितने प्रकार हैं?

7.4 ताल

भारतीय संगीत में समय मापने वाले ताल प्रकारों की बड़ी संख्या और विविधता उपलब्ध है। सांगीतिक समय का अनुमान लगाने का सही और सरल ढंग बताने के लिये षडंग नाम के छह अंग हैं। छह में से तीन अंग सामान्य प्रयोग में हैं। वे लघु, द्रुत और अनुद्रुत हैं। ये मुख्य सात तालों की बनावट में आते हैं। सामान्यतया हम केवल इन तीन अंगों का प्रयोग करते हैं। अनुद्रुत और द्रुत का समय परिमाण स्थापित है।

	अक्षरकाल	
अनुद्रुतं	1	U
द्रुतं	2	0

लघु का समय परिमाण उसकी जाति में परिवर्तन के साथ भिन्न हो जाता है। इसका समय परिमाण 3, 4, 5, 7, 9 अक्षरकाल का हो सकता है। इसका संपादन दो भागों में है, दायीं जांघ पर दायें हाथ से ताली तथा अंगुली से गिनना। इसका संकेत है। अनुद्रुत को एक ताली द्वारा गिना जाता है। द्रुत ताली तथा हाथ को हिलाने से गिनते हैं। ताल का नाम भी लिखते हैं, जैसे तिस्रजाति रूपक ताल, खंडजाति त्रिपुट ताल इत्यादि। उदाहरण के लिये आदि ताल में जब हम रचना लिखते हैं, लघु का एक छोटी खड़ी लकीर- द्वारा प्रतिनिधित्व होता है। पहले द्रुत का एक छोटी खड़ी लकीर द्वारा प्रतिनिधित्व होता है। दो खड़ी लकीरें ताल आवर्तन या चक्र की समाप्ति का प्रतिनिधित्व करती हैं।

पाठगत प्रश्न 7.4

1. समय माप क्या है?
2. लघु और द्रुत के चिह्न क्या हैं?
3. दो खड़ी लकीरें किस उद्देश्य से प्रयुक्त होती हैं?

7.5 अंतराल

स्वर लिपि में छोटे अक्षर ह्रस्व के समकक्ष हैं और एक यूनिट समय के अंतराल में स्वर स्वयं द्वारा प्रतिनिधित्व करते हैं। कर्नाटक संगीत में यूनिट समय अक्षर काल कहलाता है। दीर्घ स्वर बड़े अक्षर होते हैं, ये समय के दो यूनिट या दो अक्षर कालों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

स	एक अक्षर काल
स या सस	दो अक्षर काल
स,या ससस	तीन अक्षर काल
स; या ससससस	चार अक्षर काल

एक स्वर के बाद कौमा एक यूनिट समय द्वारा अंतराल को बढ़ाता है और सेमि कोलन समय के दो यूनिट द्वारा अंतराल को बढ़ाता है। इसके पश्चात अंतराल में वश्द्धि का प्रतिनिधित्व आवश्यक कौमा और सेमि कोलन के लगाने से होता है। एक स्वर या स्वरों के समूह पर एक पड़ी लकीर लगाने से अंतराल आधा हो जाता है।

स	स स	स स स स	
	½ ½	¼ ¼ ¼ ¼	= 1
प्रथम काल	द्वितीय काल	त्रितीय काल	
या	या	या	
विलंब	मध्यम काल	द्रुत काल	
काल			

पाठगत प्रश्न 7.5

1. छोटे और बड़े अक्षरों के अंतर लिखिये।
2. स्वरों पर पड़ी लकीर लगाने का क्या उपयोग है।

7.6 स्थायी

स्थायी का अर्थ सात स्वरों की शृंखला है जो स से आरंभ होकर नि पर समाप्त होती है। स्थायी का दूसरा नाम सप्तक है। हमारे पास तीन मुख्य स्थायी हैं। स्वर के ऊपर एक बिंदु बताती है कि वह उच्च सप्तक या तार स्थायी से संबन्धित है। उदाहरणतया सं रिं गं मं। स्वर के नीचे एक बिंदु बताती है कि वह निम्न सप्तक या मंद्र स्थायी से संबन्धित है। उदाहरणतया स निछ ध छ पछ । बिना बिंदु के मालूम होता है कि मध्य सप्तक या मध्य स्थायी से संबन्धित है। उदाहरणतया स रि ग म प ध नि।

7.7 रचनाओं के लिये आदर्श स्वर लिपि

जब हम रचना लिखना आरंभ करते हैं, सबसे ऊपर उस रचना की राग और ताल का नाम लिखते हैं। तत्पश्चात मेलकर्ता की क्रम संख्या जिससे कि राग उत्पन्न हुई है। यदि राग एक जन्य राग है तो राग का आरोहन और अवरोहन, रचयिता का नाम तथा आरोहन और अवरोहन के स्वर स्थान दिये जाते हैं।

पाठगत प्रश्न 7.6

1. स्थायी क्या है?
2. तार स्थायी क्या है?
3. मंद्र स्थायी क्या है?
4. मध्य स्थायी क्या है?

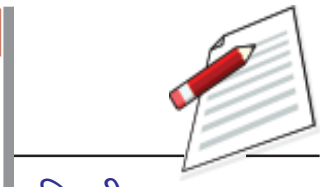

टिप्पणी

आपने क्या सीखा

स्वर लिपि को हम संगीत लिपि कहते हैं। यह स्मृति के लिये एक शक्तिशाली साधन है। स्वर लिपि में दिये गये अनुच्छेद स्वरज्ञानं और रागज्ञानं में विकसित होते हैं। एक सीखी हुई तथा अंकित रचना को गाने में स्वर लिपि की सहायता से आसानी से पुनः स्मरण किया जा सकता है। यूनिट की नकल करने के लिये कुछ संकेत हैं जो अंतराल, स्वरों का सप्तक, ताल आवर्तन आदि का सुझाव देते हैं।

पाठांत प्रश्न

1. स्वर लिपि पद्धति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि लिखिये।
2. स्वर लिपि पद्धति कितने प्रकार की है?
3. संगीत स्वरों के प्रकारों पर टिप्पणी लिखिये।
4. कर्नाटक संगीत में ताल पर एक अनुच्छेद लिखिये।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

7.1

1. स्वर लिपि का अर्थ संगीत का ख़श्य रूप है।
2. कुछ विद्यार्थी निजी उम्मीदवारों की तरह संगीत की परीक्षा देते हैं। इस प्रकार के विद्यार्थियों के लिये पुस्तकों द्वारा संगीत की शिक्षा लेना आवश्यक है।
3. 7वीं शताब्दी ई. में स्वर लिपि का अपरिकृत रूप कुडुमियामलई शिलालेख से पहचाना जा सकता है।

7.2

1. दो प्रकार की स्वर लिपि होती है।
2. संगीत समानांतर रेखाओं पर लिखा जाता है। स्वर रेखा पर और रेखाओं के मध्य लिखे जाते हैं।
3. संगीत सोल्फा शब्दांश अर्थात स रि ग म सीधी पंक्ति में लिखे जाते हैं।
4. महत्वपूर्ण तत्त्व संगीत स्वर, ताल, अंतराल, स्थायी का संकेत, खड़ी और पड़ी लकीरें हैं।

टिप्पणी

7.3

1. स्वरों के 16 प्रकार हैं जिनमें 4 के दो नाम हैं, अर्थात 12 स्वर भारतीय संगीत में प्रयुक्त होते हैं।

7.4

1. सांगीतिक समय का अनुमान लगाने का सही और सरल ढंग बताने के लिये।
2. 1 और 0
3. दो खड़ी लकीरें आवर्त के अंत को दर्शाती हैं।

7.5

1. छोटा अक्षर एक अक्षर काल बताता है और बड़ा अक्षर दो अक्षर काल बताता है।
2. स्वरों पर एक पड़ी लकीर अंतराल को आधा कर देती है।

7.6

1. स्थायी का अर्थ स्वर सप्तक है जो सात स्वरों की शृंखला है।
2. स्वरों के ऊपर एक बिंदु।
3. स्वरों के नीचे एक बिंदु।
4. बिना बिंदु मध्य स्थायी होता है।

निर्देशित कार्य कलाप

1. विद्यार्थी को सरल संगीत रूप जैसे गीतं, जाति स्वर सीखने चाहिये।
2. उसे वर्ण लिखना सीखना चाहिये।
3. कृति और अन्य रचनायें लिखने का अभ्यास करना चाहिये।

कर्नाटक संगीत में माध्यमिक कोर्स का पाठ्यक्रम

भूमिका

वैदिक युग से अध्ययन की अन्य शाखाओं के साथ संगीत को एक विषय के रूप में आवश्यक माना गया है। किसी देश और उसके लोगों का स्वभाव उनकी कला और संस्कृति के द्वारा झलकता है। यद्यपि संगीत का विकास वैज्ञानिक रूप से हुआ है, उसमें कला की भांति शालीन और गंभीर प्रकृति है। कला से अधिक यह कालांतर के संचार के रूप में विकसित हुआ है, जिसे भविष्य की पीढ़ियों तक उनके लाभ के लिये पहुँचाना आवश्यक है। यह केवल प्राथमिक और उच्च दोनों स्तरों पर एक सुनियोजित और व्यावसायिक शिक्षण पद्धति के द्वारा ही सम्भव है।

उद्देश्य

इस कोर्स का उद्देश्य :

- प्रदर्शनकारी कला के क्षेत्र में ज्ञान और कौशल बढ़ाना है;
- संगीत के लिये समीक्षात्मक समालोचना उत्पन्न करना है;
- भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति संपर्क बढ़ाना है;
- स्वर, श्रुति, गमक, राग और ताल जैसी मूल अवधारणाओं की व्याख्या करना है;
- संगीत की विभिन्न धाराओं अथवा प्रकारों, जैसे शास्त्रीय तथा गैर-शास्त्रीय में अंतर करना है।

पात्रता

कोर्स के लिये पात्रता:

- कक्षा VIII/समकक्ष परीक्षा का उत्तीर्ण होना तथा
- उम्र की कोई रोक नहीं

वितरण प्रक्रिया

संगीत ध्वनि संबंधित विषय है अत: इसका अध्ययन मौखिक परम्परा द्वारा होना चाहिये। विषय की वितरण प्रक्रिया न केवल श्रव्य कैसट और सी.डी. के माध्यम से अपितु डी.वी.डी. के माध्यम से भी होना चाहिये क्योंकि कर्नाटक संगीत के कई पक्ष दृश्य प्रक्षेपण के द्वारा सीखे जाने चाहिये।

सीखने के घंटे

कोर्स सीखने के 240 घंटे होंगे।

समय अवधि

कोर्स की समय अवधि माध्यमिक स्तर के 100 अंक युक्त स्वतंत्र विषय के रूप में एक साल रहेगी।

परीक्षा प्रणाली

कुल अंक : 100

थ्योरी : 40 अंक

प्रैक्टिकल : 60 अंक

पाठ्यक्रम की रूपरेखा

उक्त कोर्स को दो भागों में विभाजित किया गया है।

(क) थ्योरी (सिद्धांत) तथा (ख) प्रैक्टिकल (प्रयोगात्मक)

सिद्धांत भाग का एक मोड्यूल है

- सामान्य संगीत शास्त्र

प्रयोगात्मक भाग के दो मोड्यूल हैं

- कर्नाटक शास्त्रीय संगीत
- कर्नाटक उप शास्त्रीय संगीत

थ्योरी तथा प्रैक्टिकल भागों के प्रत्येक मॉड्यूल के लिये अंक तथा अध्ययन के लिये निर्धारित न्यूनतम घंटे इस प्रकार हैं:

पाठ सं.	पाठ आधारित मॉड्यूल विस्तार	न्यूनतम अध्ययन घंटे	अंक	
			प्रत्येक पाठ	प्रत्येक मॉड्यूल
	थ्योरी **मॉड्यूल-1 सामान्य संगीत शास्त्र**			40
1.	भारतीय संगीत को कर्नाटिक संगीत के रूप में उत्पत्ति एवं विकास तथा उसकी उन्नति	10 घंटे		

2.	कर्नाटक संगीत के मूल सिद्धांत	10 घंटे		
3.	प्रमुख रचयिताओं की जीवनियां	10 घंटे		
4.	अभ्यास गान का परिचय	10 घंटे		
5.	सभा गान का परिचय	15 घंटे		
6.	संगीत वाद्यों का वर्गीकरण	15 घंटे		
7.	कर्नाटक संगीत की स्वरलिपि पद्धति	10 घंटे		
	कुल	**80 घंटे**		
	प्रैक्टिकल			**40**
	मॉड्यूल-2 शास्त्रीय कर्नाटक संगीत			
1.	सरली वरीसा, जग्गु स्थायी वरीसा और हेच्चु स्थायी वरीसा	25 घंटे		
2.	जनता और दातू वरीसा	10 घंटे		
3.	अलंकार	15 घंटे		
4.	पिल्लरी गीत तथा संचारी गीत	15 घंटे		
5.	जाति स्वर तथा स्वरजाति	15 घंटे		
6.	वर्ण	20 घंटे		
7.	किर्तना/कीर्ति	20 घंटे		
	कुल	**120 घंटे**		
	मॉड्यूल-3 उप शास्त्रीय कर्नाटक संगीत			**20**
8.	दिव्यनाम संकीर्तन तथा उत्सव संप्रदाय	10		
9.	तरंग	10		
10.	अन्नमाचार्य के संकीर्तन और पुरंदर दास के पद	10		
11.	भजन	10		
	कुल	**40 घंटे**		
	कुल	240 घंटे		100

कोर्स विवरण

थ्योरी **2 घंटे** **40 अंक**

मॉड्यूल I : सामान्य संगीत शास्त्र

दृष्टिकोण:

भारतीय संगीत के उद्गम की तिथि दैनिक युग तक जाती है। इसका विकास कई शताब्दियों तक हुआ तथा यह संगीत की दो धाराओं में विभाजित हुआ, यथा-कर्नाटक संगीत जो भारत के दक्षिणी भागों में प्रचलित हुआ तथा हिन्दुस्तानी संगीत जो भारत के उत्तरी भागों में प्रचलित हुआ। इसके विकास के समानान्तर भरत, मतंग, नारद, शार्ङ्देव और अन्य कई संगीत शास्त्रियों ने नाद, श्रुति, स्वर, गमक इत्यादि जैसे भारतीय संगीत के कई मूल सिद्धांतों को परिभाषित किया। इनके अतिरिक्त विद्यारण्य, राममात्य, व्यंकटमखी एवं अन्य संगीत शास्त्रियों ने राग, मेल, ताल तथा गीत, स्वरजाति और वर्ण जैसी रचनाओं पर अपने विद्वत्तापूर्ण परिकलन प्रस्तुत किये हैं।

पाठ-1 : भारतीय संगीत की उत्पत्ति एवं विकास

पाठ-2 : कर्नाटक संगीत के मूल सिद्धांत (नाद, स्थायी, श्रुति, स्वर, प्रचलित गमक, राग और ताल)

पाठ-3 : प्रमुख रचयिताओं की जीवनियां पुरंदर दास, (त्रिमूर्ति) त्यागराज मुत्तुस्वामी दीक्षित्तर-श्यामा शास्त्री, स्वाति तिरुनल, अन्नमाचार्य

पाठ-4 : अभ्यास गान का परिचय

गीत, जाति स्वर, स्वर जाति, तान-वर्ण जैसी संगीत विधाओं के विषय में ज्ञान की रूपरेखा

पाठ-5 : सभा गानं का परिचय

- कल्पित संगीत तथा मनोधर्म संगीत
- कल्पित संगीत के अंतर्गत रचनाओं के नाम तथा मनोधर्म संगीत की पाँच शाखाओं
- तान-वर्ण, कृति-कीर्तनं, तिल्लाना, पदम और जावली के ज्ञान की रूपरेखा

पाठ-6 : संगीत वाद्यों का सामान्य वर्गीकरण (तानपुरे की संरचना और वादन विधि का विस्तृत अध्ययन)

पाठ-7 : कर्नाटक संगीत की स्वरलिपि पद्धति

मूल्यांकन पद्धति

क्र.स.	मूल्यांकन की विधि	अवधि	अंक
1.	थ्योरी - मोड्यूल I सामान्य संगीत शास्त्र	2 घंटे	40
2.	प्रैक्टिकल - मोड्यूल II + III मोड्यूल II कर्नाटक शास्त्रीय संगीत - 40 अंक मोड्यूल III कर्नाटक उप शास्त्रीय संगीत - 20 अंक	3 घंटे	60
		कुल योग	100

प्रश्न पत्र का प्रारूप

विषय : कर्नाटक **कक्षा : माध्यमिक स्तर**

पेपर : थ्योरी सैद्धांतिक अंक : 40 **समय अवधि : 2 घंटे**

1. उद्देश्यानुसार अंक भार

उद्देश्य	*अंक*	*कुल अंक का प्रतिशत*
ज्ञान	15	35%
समझ	10	25%
उपयोग	10	25%
कौशल	5	15%
	40	100%

2. प्रश्न के प्रकार के अनुसार अंक भार

प्रश्न का प्रकार	*प्रश्न की संख्या*	*कुल*	*विद्यार्थी के लिए संभावित समय*
दीर्घ उत्तर प्रश्न प्रकार	3	3x5 = 15	18 मि. प्रत्येक = 54 मि.
लघु उत्तर प्रश्न प्रकार	8	8x2 = 16	6 मि. प्रत्येक = 48 मि.
अति लघु उत्तर प्रश्न प्रकार	5	5x1 = 5	2 मि. प्रत्येक = 10 मि.
बहु विकल्प प्रश्न	4	4x1 = 4	2 मि. प्रत्येक = 8 मि.
	20	40	120 मि.

3. विषय के आधार पर बल

क्र.सं.	*विषय/उप-विषय (कृ. स्पष्ट करें)*	*अंक*
1.	सामान्य संगीत शास्त्र (स्वर लिपि, वाद्यों की थ्योरी)	18
2.	कर्नाटक संगीत का संक्षिप्त इतिहास	12

3.	कर्नाटक संगीत के महान रचयिता	10
	कुल	40

2. प्रश्न पत्र की कठिनता का स्तर

इकाई/उप इकाई	अंक प्रतिशत
कठिन (प्रतिभाशाली विद्यार्थियों द्वारा किए जा सकते हैं।)	15%
सामान्य (उन विद्यार्थियों द्वारा किए जा सकते हैं। जिन्होंने नियमित रूप से विषय सामग्री का अध्ययन किया हो)	60%
सरल (उन विद्यार्थियों द्वारा संतोषप्रद तरीके से किए जा सकते हैं। जिन्होंने अध्ययन सामग्री पढ़ी हो)	25%

नमूना प्रश्न पत्र
कर्नाटक संगीत

समय : 2 घंटे

नोट : सभी प्रश्नों के उत्तर दीजिए। अंक : 40

- 1 अंक के प्रश्नों का उत्तर 10 शब्दों में दें
- 2 अंक के प्रश्नों का उत्तर 20 शब्दों में दें
- 3 अंक के प्रश्नों का उत्तर 30 शब्दों में दें
- 4 अंक के प्रश्नों का उत्तर 40 शब्दों में दें
- 5 अंक के प्रश्नों का उत्तर 50 शब्दों में दें

1. निम्न में से सुषिर वाद्य का नाम बताइये।. 1

   (क) मेंडोलिन (ख) वीणा (ग) बांसुरी (घ) वायलिन

2. बृहदेशी किसने लिखा था? 1

   (क) पुरंदर दास (ख) भरत (ग) मतंग (घ) श्यामा शास्त्री

3. नवरत्नमालिका किनकी रचना थी? 1

   (क) स्वाति तिरुनल (ख) त्यागराज (ग) पुरंदर दास (घ) श्यामा शास्त्री

4. मत्य ताल का अक्षरकाल क्या है? 1

   (क) 14 (ख) 10 (ग) 8 (घ) 6

5. कर्नाटक संगीत का स्वयं युग कौन-सा है? संक्षिप्त रूप से वर्णन करें।. 1

6. त्यागराज के विद्यार्थियों और अनुगामियों के नाम बताइये। 1

7. धन रागों का उदाहरण सहित वर्णन करें। 1

8. राग मायामालवगौल के स्वरस्थान लिखें। 1

9. तरंग संगीत विद्या का वर्णन करें। 1

10. भारतीय संगीत के लक्षण ग्रंथों का संक्षिप्त में उल्लेख करें। 2

11. कर्नाटक संगीत के द्वादशस्वरस्थानों का वर्णन करें। 2

12. वर्ज्य रागों को वर्गीकृत करें। 2

13. कृति संगीत विधा स्पष्ट करें। 2

14. कर्नाटक संगीत स्वर लिपि के साधारण नियमों का उल्लेख करें। 2

15. उत्सव संप्रदाय कीर्तन क्या है? संक्षेप में वर्णन करें। 2

16. निम्न में से किसी एक प्र संक्षिप्त टिप्पणी लिखें: 2

(i) गीत (ii) जाति स्वर (iii) स्वर जाति

17. संगीत त्रिमूर्ति का योगदान संक्षिप्त रूप से समझाइये। 4

18. अभ्यास गान के भिन्न रूपों का विवरण दें। 5

19. कर्नाटक संगीत के संगीत वाद्यों का वर्गीकरण करें। 5

20. कर्नाटक संगीत के प्रति पुरंदर दास के योगदान को संक्षिप्त रूप से लिखें और वर्ण संगीत विद्या के प्रकारों का वर्णन करें। 3

अंक योजना

प्र.सं.	उत्तर	अंक वितरण	कुल अंक
1.	(ग) बांसुरी	1	1
2.	(ग) मतंग	1	1
3.	(घ) श्यामा शास्त्री	1	1
4.	(ख) 10	1	1
5.	कर्नाटक संगीत के लिये 18वीं शताब्दी को स्वर्ण युग माना जाता है। इस युग में ही श्यामा शास्त्री, त्योगराज और मुत्तुस्वामी दीक्षितर जैसे संगीत त्रिमूर्ति अस्तित्व में आये और कृति संगीत विद्या की रचना से कर्नाटक संगीत विधा की रचना में कर्नाटक संगीत के क्षेत्र में क्रांति लाये।	1	1
6.	त्यागराज के वालाजपेत व्यंकटरमन भागवतर, वीना कुप्पय्यर, पटनम सुब्रमन्य अय्यर, मैसूर वासुदेवाचार, रामनाडु श्रीनिवास अय्यंगर आदि जैसे प्रतिभाशाली विद्यार्थी थे।	1	1
7	धन राग गौरवपूर्ण रागें हैं जिनसे संगीत सभा का आरम्भ हो सकता है। इन रागों के माध्यम स तानं वादन का स्वाभावित मार्ग बनता है। ये हैं नट्ट, गौल, आरमी, वराली और श्री।	1	1
8	मयामालवगौल के स्वरस्थान प्रश्न और पंचम के अतिरिक्त शुद्ध ऋषभ, अंतर गंधार, शुद्ध मध्यम, शुद्ध धैवत और भाकली निषाद हैं।	1	1
9	तरंग 18वीं शताब्दी में नारायण तीर्थ द्वारा रचित संगीत रचना है। इसे सामान्यतया संगीत रचना है। इसे सामान्यतया संगीत सभा में रागं तानं पल्लवी के पश्चात् गाया जाता है।	1	1
10.	लक्षण ग्रंथ अगली पीढ़ी के लिये शास्त्र एवं विकास का स्पष्ट दृष्टिकोण देता है। संगीत का सर्वप्रथम उपलब्ध	1	2

	ग्रंथ भरत द्वारा लिखित नाट्यशास्त्र है, जिसमें वे 22 श्रुति, 12 स्वरस्थान इत्यादि .... मतंग रचित वृहदेशी के द्वारा हमें राग के विषय में सर्वप्रथम ज्ञात होता है। नारद रचित संगीत मकरंद तथा शारंगदेव रचित संगीत रत्नाकर भारतीय संगीत के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ हैं। विद्यारव्य रचित संगीत सार, रामामात्य कृत स्वरोलकलानिधि व्यंकटमखी कृत चतुरदंडी प्रकाशिका तथा गोविंदाचार्य रचित संग्रह चूड़ामणि कर्नाटक संगीत के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ हैं।	1	
11.	समस्त सप्तह स्थायी में सांगीतिक स्वरों के स्थानों को स्वर स्थान कहते हैं। सप्त स्वरों में 'षड़ज और प्ंचम की कोई भिन्न आंदोलन संख्या नहीं होती और वे उत्वल स्वर कहलाते हैं। ऋषभ, गंधार, मध्यम, धैवत और निषाद जैसे शेष स्वरों में प्रत्येक के दो प्रकार हैं, जैसे शुद्ध ऋषभ – चतुभुति ऋषभ साधारण गंधार – अंतर गंधार शुद्ध मध्यम - प्रति मध्यम शट धैवत – चतुश्रूति धैवत कैसिकि निषाद - ककलि निषाद अत: स्वर स्थानों की कुल संख्या 12 हैं।	1 1	2
12.	राग में उपस्थित स्वरों की संख्या के आधार प्र वर्ज्य राग षाडव, औडव और स्वरांतर में वर्गीकृत हैं। इन्हें षाडव-संपूर्ण, संपूर्ण-षाडव, औडव-संपूर्ण, संपूर्ण-औडव, षाडव-औडव और औडव-पाडव रागों में राग के आरोहन तथा अवरोहन में उपस्थित स्वरों की संख्या के अनुसार पुन: विभाजित किया जा सकता है।	2	2
13.	कृति कर्नाटक संगीत की उत्कृष्टतम संगीत रचना हैं। इसमें पल्लवी, अनुपल्लवी और चरण जैसे भाग होते हैं। यह संगीत विद्याविशुद्ध संगीत के अंतर्गत मानी जाती है, जिसमें संगीत को सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता है तथा इसमें चित्त स्वर-स्वर साहित्य, सोलकट्टू स्वर, संगति, मध्यमकला साहित्य, स्वराक्षर इत्यादि सजावट अंग होते हैं।	1 1	2

14.	संगीत का लिखित स्वरूप स्वर लिपि है। यह सांगीतिक सोच का प्रपत्र है जिसमें अक्षरों और चित्रों जैसे लिखित संकेत होते हैं। सांगीतिक स्वर के ऊपर या नीचे बिंदु डालकर तार या मंद्र स्थायी दिखाना, समय की अवधि कम करने के लिये किसी स्वर समूह के ऊपर पड़ी लकीर, ताल के प्रत्येक अंग के आरम्भ में खड़ी लकीर तथा ताल के आरम्भ और अंत में दो खड़ी लकीरें।	2	2
15	उत्सव सम्प्रदाय कीर्तन वे रचनायें हैं जिनका प्रयोग अर्चना के समय उपचारों (प्रणालियों) के साथ गायन के लिये होता है। इनकी संख्या 24 है जिनमें एक चूर्णिका में भगवान विष्णु का गुणगान होता है। इस प्रकार की रचनायें भागवत परम्परा अथवा संकीर्तन भजन पद्धति में मिलती है।	2	2
16.	प्रथम प्रकार में ताल जाति प्रकार के स्वर वाक्यांशों के आधार पर रचना होती है एवं कर्नाटक संगीतज्ञों द्वारा अभ्यास के लिये प्रयुक्त होता है तथा दूसरा प्रकार नृत्य समारोहों में प्रयुक्त होता है एवं अति धीमी गति में नृत्य के साथ गाया या प्रस्तुत किया जाता है। एक अन्य प्रकार का वर्ण है, जो दत्तु वर्ण कहलाता है।	1 2	3
17.	श्यामा शास्त्री, त्यागराज और मुत्तुस्वामी दीक्षितर प्रचलित रूप से संगीत त्रिमूर्ति कहलाते हैं। वे एक नये प्रकार की संगीत विधा-कृति की रचना में अग्रगणी थे। वे समकालीन थे तथा तमिलनाडु के तंजौर जिले में तिरुवरुर के रहने वाले थे। श्यामाशास्त्री की कृतियों की 'कदली', त्यागराज की कृतियों की 'द्रक्षा' तथा दीक्षितर की रचनाओं की 'नारियल' से उनके सीखने और प्रदर्शन में कठिनता के आधार पर तुलना की गई है। ये सभी रचयिता कई कृति समूहों के लिये प्रसिद्ध हैं, जबकि श्यामा शास्त्री ने वर्ण और स्वरजाति की भी रचना की है।	2 2	4

18.	कर्नाटक संगीत के अभ्यास गान और सभा गान नामक दो भाग हैं। प्रथम भाग एक संगीत विद्यार्थी के लिये उत्तम नींव बनाने के लिये मूल अध्याय हैं। इनमें सरली वरीसई, तक (धातू) वरीसई, सप्त ताल अलंकार, गीत, जातिस्वर, स्वरजाति और वर्ण जैसे अभ्यास हैं। इनमें जीत तक के स्वर-अभ्यास गायन प्रणाली को विकसित करने के साथ लय प्रतिरूपों को भी साधने के लिये उपयोगी हैं। गीतं सरल मधुर संगीत है, जो राग और रचना की आकृति प्रस्तुत करता है। दूसरी ओर, जातिस्वर, जिसमें पल्लवी अनुपल्लवी और चरण जैसे भाग होते हैं, वर्णं के लिये आधार प्रस्तुत करता है। वर्णं एवं प्रमुख रचनायें अभ्यास और सभा गान दोनों के लिये प्रयुक्त होती हैं। यह स्वर, राग प्रारूप, गमक एवं लयात्मक स्वर प्रतिरूपों का मिश्रण है।	2 2 1	5
19.	संगीत वाद्य वादन प्रणाली के आधार पर तत (तंत्री या कोर्डोफोन), अवनइ (ताल या मेंब्रनोफोन), सुषिर (फूंक से बजने वाले या एयरोफोन) तथा धन वाद्यों (इडियोफोन) में वर्गीकृत हैं। इनमें से तत वाद्यों के मुख्य वाद्य वीणा, वॉयलिन इत्यादि हैं तथा अवनद्ध वाद्यों के मुख्य वाद्य मृदंग, खंजीरा, ताविल इत्यादि है। सुषिर वाद्यों के प्रमुख वाद्य बांसुरी व नागस्वरं हैं तथा धन वाद्यों के प्रमुख वाद्य घटम, जलरा आदि हैं। तत वाद्यों को पुनः वायलिन की भांति गज मुक्त प्रकार तथा वीणा आदि की भांति खींचने वाले प्रकार में विभाजित किया गया है। संगीत वाद्यों का एक अन्य प्रकार श्रुति वाद्य (ड्रोन वाद्य) भी हैं वो वाद्य किसी भी प्रस्तुति के लिये एक अभिन्न भाग के रूप में मूल श्रुति संगत प्रदान करता है। पारंपरिक श्रुति वाद्य तानपुरा और ओट्टु वाद्य हैं। इनमें वाद्यों के अतिरिक्त इलेक्ट्रानिक तानपुरा और वाद्य भी उपलब्ध हैं।	2 2 1	5
20.	पुरंदर दास को कर्नाटक संगीत का संगीत पितामह माना	1	3

	जाता है। इन्होंने कई जाति, सूलारि और पदों की रचना की है। उन्होंने सरली वरीसई, जनता वरीसई आदि कई वरीसई गायन के लिये अभ्यास के रूप में व्यवस्थित किये। आरम्भिक विद्यार्थियों के लिये मायामालवगौल को सिखाने वाला राग बनाया जाता इनके द्वारा आरम्भ हुआ। कर्नाटक संगीत में वर्ण वह संगीत विद्या है जो अभ्यास और सभा गान दोनों का प्रतिनिधित्व करती है। वर्ण के तान वर्ण और पद वर्ण दो प्रकार हैं।	1	
कुल		40	40

आपके सुझाव

____

____

____

____

क्या आपने कर्नाटक संगीत की कोई अन्य पुस्तक पढ़ी? हाँ/नहीं

यदि हाँ, तो कारण बताइए

____

____

नाम : ______________

नामांकन: ______________

पता : ______________

____

विषय : ______________

पुस्तक सं.: ______________

पाठ्यक्रम समन्वयक
पर्फोर्मिंग आर्ट्स शिक्षा
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
ए–24–25, इंस्टीट्यूशनल एरिया
सेक्टर – 62, नोएडा (उ. प्र.)
पिन – 201309

डाक
टिकट

संलग्नक स्वीकार्य नहीं

पहला मोड़

पाठों पर आपकी प्रतिक्रिया 1-7

पाठ सं०	पाठ का नाम	पठित सामग्री		भाषा		कथा विषयवस्तु दैनिक जीवन से संबद्ध है		चित्र		क्रियाकलाप		आपने क्या सीखा		
		सरल	कठिन	सरल	जटिल	हाँ	जटिल	उपयोगी	अनुपयोगी	रुचिकर तथा उपयोगी	रुचिकर लेकिन उपयोगी नहीं	अनुपयोगी	बहुत उपयोगी	कुछ उपयोगी
1.														
2.														
3.														
4.														
5.														
6.														
7.														

अंतिम मोड़ और बंद कर दीजिए

आज ही पूरा भरकर इस प्रारूप को डाक से भेज दीजिए

चौथा मोड़

तीसरा मोड़

प्रिय शिक्षार्थी!

आशा है इस पाठ्य सामग्री को पढ़कर आपको आनंद आया होगा। हमनें पाठ्य-सामग्री को प्रासंगिक, उपयोगी और रोचक बनाने का पूरा प्रयास किया है।

इन पाठों के माध्यम से आपके जीवन कौशलों को विकसित करने की कोशिश की गई है। पाठगत प्रश्न तथा पाठांत प्रश्न इसलिए दिए गए हैं ताकि आप विषय को समझकर दैनिक जीवन में उनका उपयोग कर सकें।

आपकी प्रतिक्रिया के आधार पर हम इसका सुधार करेंगे। कृपया थोड़ा-सा समय निकाल कर इस फॉर्म को भर कर हमें भेजिए।

आपके सहयोग के लिए धन्यवाद।

पाठ्यक्रम समन्वयक
पर्फोर्मिंग आर्ट्स शिक्षा

प्रश्नों पर प्रतिक्रिया

पाठ सं०	पाठ का नाम	सरल	कठिन	रुचिकर तथा उपयोगी	रुचिकर तथा उपयोगी नहीं	अरुचिकर
1.						
2.						
3.						
4.						
5.						
6.						
7.						

दूसरा मोड़